षष्ठम अध्याय

6.1 लोककथा

लोक में शिक्षा, मनोरंजन तथा रोमांच हेतु लोक-परिवेश और लोकानुभूति को आधार बनाकर जनमानस में कुछ कथाएँ प्रचलित होती हैं, ऐसी लोक प्रचलित अधिकतर कथाएँ उपदेश प्रधान होती हैं। इन कथाओं के माध्यम से किसी भी समाज की जीवन-शैली तथा सामाजिक-सांस्कृतिक एवं नैतिक मूल्यों का बोध होता है। चाय जनगोष्ठी में प्रचलित लोककथाएँ अत्यंत सहज भाषा में सामान्य भावभूमि पर जीवन के मर्म को प्रस्तुत करती हैं। चाय श्रमिक समाज में प्रचलित लोककथाओं में मुख्यतः मिथकीय कथाएँ, राजा-महाराजाओं के जीवन के प्रसंगों पर आधारित कथाएँ, सामाजिक कथाएँ, व्रत संबंधी तथा पंचतंत्र की शिक्षाप्रद कहानियाँ प्रमुख हैं। इस उप-अध्याय में विभिन्न विषयवस्तुओं को आधार बनाकर चाय जनगोष्ठी में पीढ़ियों से प्रचलित कुछ लोककथाओं को शामिल किया गया है। अध्ययन की सुविधा हेतु इन लोककथाओं को पौराणिक, धार्मिक, उपदेशात्मक तथा सामाजिक श्रेणी में विभक्त करके उनका समाजभाषावैज्ञानिक दृष्टि से विश्लेषण किया गया है।

6.1.1 पौराणिक कथाएँ

* *'बरषणेर सृष्टि कि रकम होलेक?' (वर्षा की सृष्टि कैसे हुई?)*

यह चाय जनगोष्ठी में प्रचलित एक मिथकीय कथा है जिसमें सृष्टि के आरंभ में वर्षा किन कारणों से प्रारंभ हुई इसका कथात्मक वर्णन किया गया है। चाय जनगोष्ठी के कुछ समुदायों में यह मत प्रचलित है कि सृष्टि के आरंभिक समय में आकाश और धरती के बीच की दूरी आज की तरह कदापि नहीं थी। यह दूरी इतनी कम थी कि लोग जब चलते थे तो उनका सिर आकाश से टकरा जाता था। इसी कारण विभिन्न सांसारिक काम-काज में लोगों को अत्यंत कठिनाई का सामना करना पड़ता था। उस समय किसी गाँव में एक कुबड़ी वृद्ध महिला रहती थी। वह वृद्ध महिला बिल्कुल निःसहाय थी तथा उसका कोई आत्मीय जन भी न था। इसीलिए जरठ अवस्था में भी वह स्वयं अपने सभी काम किया करती थी। एक दिन वह कुब्जा वृद्धा *ढेकी* (असम में अनाजों की सफाई हेतु प्रयुक्त घरेलू उपकरण) में धान की सफाई कर रही थी। पैर से ढेकी चलाते हुए जब-जब वह ऊपर की ओर उठती तब-तब उसका सिर आकाश से टकरा जाता था और चोट लग जाती थी। लगातार पीड़ित होने के कारण वह वृद्ध महिला अत्यंत क्रोधित हुई और जिस लाठी से वह धान को इकठ्ठा कर रही थी उसी से आकाश की ओर प्रहार कर दिया। कुब्जा वृद्धा के प्रहार से आकाश ऊपर की ओर उठ गया तथा उसके

सीने में लाठी से एक ऐसा सुराख़ हुआ जो आज तक बंद नहीं हुआ है। उसी छिद्र से आकाश में संचित रक्त रूपी जल वर्षा जल में परिणत होकर बरसता है। समाजभाषिक दृष्टि से अध्ययन-विश्लेषण हेतु इस मिथकीय लोककथा के कुछ अंश दृष्टव्य हैं-

अनुशीलन 1:

"चाह जनजातिर बिश्वास मते पृथिवीर सृष्टि होवार आदि समयमें आकाशटा पृथिवीके गातमें लागे थाकार बहुत निछे छिलो। ओहेखातिर चला-बोला करबार नाई होल सांसारिक काम-काज करतेले मानुषेर बहुत असुविधा होते रहे। ऊपर डिगे झाप मारलेउ माथाई ढुसमाई जावार निछे थाका आकाशटार खातिरे मानुषेर बहुत कष्ट होते रहे जोदिउ दुःख-कष्टकेर माझेइ मानुषरा दिन पार करते रहे।"[1]

आशय यह है कि चाय जनगोष्ठी में प्रचलित लोक विश्वास के अनुसार पृथ्वी की सृष्टि के आदिकाल में आकाश और पृथ्वी एक-दूसरे में लगभग सटे हुए थे। इसीलिए चलने-फिरने अथवा सांसारिक काम-काज करने में मनुष्य को बहुत असुविधा होती थी। ऊपर की ओर कूदने पर वह सिर में टकरा जाता था। यद्यपि आकाश के नीचे होने के कारण लोगों को बहुत कष्ट होता था किंतु इसी दुःख-कष्ट के बीच वे अपना जीवन निर्वाह करते थे। उपर्युक्त पंक्तियों में *'समय'*, *'सृष्टि'*, *'आदि'*, *'समय'*, *'दुख'*, *'कष्ट'*, *'बहुत'* आदि जैसे मानक शब्दों का प्रयोग हुआ है जो मूलतः संस्कृत भाषा के हैं। लोककथा के उक्त अंश में प्रयुक्त *'बिश्वास'* शब्द दरअसल संस्कृत के 'विश्वास' शब्द का परिवर्तित रूप है किंतु यह असमिया और बांग्ला भाषा में इसी रूप में व्यवहार किया जाता है। *'ओहेखातिर'* शब्द 'इसीलिए' के संदर्भ में भोजपुरी भाषा के कुछ क्षेत्रीय रूपों में प्रयुक्त होता है। इसके अलावा *'गात'* असमिया भाषा का शब्द है जिसका अर्थ है 'शरीर'। *'काम-काज'*, *'सांसारिक'*, *'असुविधा'* आदि शब्द अधिकतर हिंदी भाषा की मानक शब्दावली है। *'मानुषेर'* (लोगों का), *'झाप'* (कूदना), *'माथाई'* (सिर में), *'जावार'* (जाना) आदि सभी शब्द बांग्ला भाषा में प्रयुक्त होने वाले शब्द हैं तथा *'छिलो'* बांग्ला क्रिया है। ये सभी शब्द सादरी भाषा के वाक्यों में प्रयुक्त होकर कोड-मिश्रण की स्थिति को दर्शा रहे हैं। *'निछे'* हिंदी के 'नीचे' शब्द का निम्न कोड रूप है। अतः यहाँ भाषाद्वैत की स्थिति है। बांग्ला भाषा में *'चला-बोला'* का 'चलने-फिरने' के अर्थ में प्रयोग किया जाता है। यहाँ आंशिक पुनरुक्ति है। *'काम-काज'* में आधिक्यबोधक पुनरुक्ति है। *'आकाश'*, *'पृथिवी'* जैसे शब्द खगोल विज्ञान से संबंधित प्रयुक्तियाँ हैं।

अनुशीलन 2:

"ढेकी कूटा जाघाटाई धान समटाई दितेले मानुष नाई थाकार खातिरे बुढ़ीये उसकानि डांगलिये निजेई समटाई लिते रहे। ढेकी कूटबार समये प्रत्येक बारे आकाशटा बुढ़ीर माथाई ढुसमाई जावार खातिरे तबे बहुत दुःख पाते छिलो। बुढ़ीये जोतो पारे सह्य करते रहे। पिछे माथार एकटूकरा जाघाये घने-घने ढुसमाई खावार खातिरे बुढ़ीर धैर्यर सीमा हेराई गेलेक। ओहे रागे हाते थाका उसकानि डांगटारे बहुतजुरे आकाशेर बुकेर कुईस दिलेक।"[2]

अर्थात् वृद्ध महिला की सहायता हेतु कोई भी व्यक्ति मौजूद नहीं था जो ढेकी में धान कूटते हुए उसकी कुछ सहायता कर दे। इसीलिए वह स्वयं ही एक लंबी लाठी से धान को इकट्ठा का रही थी। ढेकी चलाते हुए कुब्जा वृद्ध महिला का सिर प्रत्येक बार आकाश से टकराता था। शरीर के एक ही अंग में बार-बार चोट लगने से उस महिला की पीड़ा असह्य होती जा रही थी। अंततः अधीर होकर क्रोधावेश में उसने उस लंबी लाठी से आकाश के सीने में तीव्र प्रहार कर दिया। उपर्युक्त कथा की पंक्तियों में *'प्रत्येक', 'बहुत', 'सीमा', 'सह्य'* आदि हिंदी भाषा के मानक शब्द हैं। इसके अलावा यहाँ अधिक संख्या में बांग्ला के शब्दों का प्रयोग हुआ है। जैसे: *'जाघाटा'* (स्थान), *'थाकार'* (रहने हेतु), *'काटबार'* (काटने के लिए), *'आकाशटा'* (आकश), *'माथाई'* (सिर में), *'जावार'* (जाने के लिए), *'छिलो'* (था), *'जोतो'* (जितना), *'माथार'* (सिर का), *'रागे'* (क्रोध में), *'बुकेर'* (सीने का) आदि। इन पंक्तियों में कुछ ऐसे शब्द भी हैं जो असमिया तथा बांग्ला दोनों ही भाषाओं में व्यवहृत हैं। यथा: *'हाते'* (हाथ में), *'डांग'* (लाठी), *'जुरे/ जोरे'* (जोर से), *'निजेई'* (स्वयं ही) आदि। परंतु *'ढेकी कूटा'* मूलतः असमिया शब्द है। ढेकी से घर में ही फसल को कूटकर साफ किया जाता है। इस प्रकार हम देखते हैं कि यहाँ सादरी भाषा के वाक्यों के अंतर्गत हिंदी, बांग्ला तथा असमिया भाषा के शब्दों का प्रयोग होने के कारण कोड-मिश्रण की स्थिति है। साथ ही इससे चाय जनगोष्ठी समाज के बहुभाषी होने का भी बोध होता है। *'कूईस'* (घुसाना) तथा *'समटाई'* (इकट्ठा कर देना) ये दोनों शब्द निम्न कोड के रूप में प्रयुक्त हैं। इनका मानक रूप 'कूच' तथा 'सिमटना' है। अतः यहाँ भाषाद्वैत की स्थिति है। *'घने-घने'* पूर्ण पुनरुक्ति को दर्शाता है जो अधिकता के अर्थ में प्रयुक्त हुआ है। *'ढेकी', 'धान', 'डांग'* आदि घरेलू उपकरण से संबंधित प्रयुक्तियाँ हैं।

* *'शीत आर बसंत' (शीत और वसंत)*

प्राचीन समय में किसी देश में एक अत्यंत प्रतापी, दानवीर, दयालु और प्रजा वत्सल राजा हुआ करते थे। राजा-रानी और उनकी समस्त प्रजा अत्यंत हर्ष और आनंद से प्रफुल्लित रहते थे किन्तु उन्हें एकमात्र दुःख

यह था कि राजा-रानी की कोई संतान न थी। अनेक जप-तप, यज्ञानुष्ठान के पश्चात रानी गर्भवती हुई। एक दिन रानी शयन कक्ष में विश्राम करते हुए अपनी संतति के लालन-पालन के संदर्भ में सोच रही थी कि सहसा उनकी नजर बकुल के पेड़ पर बने घोंसले पर पड़ी। उस घोंसले में एक जोड़ी मैना अपने नन्हें-नन्हें बच्चों के साथ रहते थे। एक दिन अचानक मादा मैना की मृत्यु हो गयी। इससे रानी बेहद निराश हुई परन्तु कुछ दिनों के अंतराल पर नर मैना ने दूसरी शादी कर ली। मैना के नवजात बच्चों को सौतेली माँ (दूसरी मादा मैना) की तमाम अत्याचारों को सहना पड़ा। अंततः मैना के सभी बच्चों ने भी एक-एक कर दम तोड़ दिये। इस पूरी घटना ने रानी को अंदर तक झकझोर दिया। वह गंभीर स्वर में राजा को इस पूरी घटना का विवरण देती है तथा भविष्य में ऐसी घटना के प्रति आशंका और चिंता व्यक्त करती है। तत्पश्चात् राजा ने रानी के प्रति अपना प्रगाढ़ व एकनिष्ठ प्रेम व्यक्त करते हुए यह आश्वस्ति दी कि किसी भी परिस्थिति में राजा के जीवन में दूसरी स्त्री का कोई स्थान नहीं होगा। कुछ ही महीनों के बाद रानी ने दो स्वस्थ बालकों को जन्म दिया जिससे राजा और प्रजा दोनों को अपना उत्तराधिकारी मिला। नियति को कुछ और ही मंजूर था। किसी गंभीर रोग से ग्रसित होने के कारण रानी काल कवलित हो गयी। शोक संतप्त राजा और प्रजा अपने दैनंदिन कार्य में किसी तरह संलग्न रहते थे। रानी के वियोग से आहत राजा के मन में जीवन से विरक्ति हो चुकी थी। वे एक तरफ अपना राजधर्म निभाते थे तो दूसरी तरफ माता-पिता के दायित्वों का अकेले ही निर्वहन करते थे। ऐसे में मंत्रियों ने विचार-विमर्श करके राजा के सम्मुख पुनर्विवाह का प्रस्ताव रखा किन्तु राजा ने इस प्रस्ताव को सिरे से ख़ारिज कर दिया। इतना ही नहीं दूसरे राज्य के राजा ने भी कुछ चतुर मंत्रियों के द्वारा अपनी पुत्री के विवाह का प्रस्ताव भेजा। उनकी कुटिल मंत्रणा से राजा ने प्रभावित होकर पुनर्विवाह के प्रस्ताव को स्वीकार कर लिया। इसके बाद राजा के जीवन में प्रेमानुराग का पुनः आगमन हुआ तथा पारिवारिक दायित्वों और राज-काज में संतुलन स्थापित हो गया।

इस तरह काफी समय बीत गये और नयी रानी के गर्भवती होने की सूचना मिली। गर्भावस्था के दौरान रानी के मन में एक ही असंतोष का भाव था कि राजा के दो-दो ज्येष्ठ पुत्रों के कारण उसकी संतान कभी राजा का पदभार ग्रहण नहीं कर पाएगी। एक दिन राजा के दोनों पुत्र गेंद खेल रहे थे कि सहसा उस गेंद से रानी के गर्भ में चोट लगने के कारण वह अचेत हो गयी। रानी ने इस मौके का यथोचित लाभ उठाया। राज-वैद्य के साथ मिलकर राजा को यह सूचना दिलवायी कि रानी के उपचार हेतु राजा के दोनों पुत्रों की बलि देकर उनके रक्त से तिलक करना अनिवार्य होगा। तमाम दुविधाओं के बावजूद राजा ने न चाहते हुए भी अपने पुत्रों की बलि हेतु आज्ञा दे दी किन्तु कसाई ने मोहवश दोनों राजकुमारों को जीवित छोड़ दिया और रानी के तिलक के लिए कुत्ते

का रक्त दे दिया। इस तरह से दोनों राजकुमार अपने राज्य से कोसों दूर वन में भटकने लगे। रात्रि के समय में एक पेड़ के नीचे विश्राम करते हुए दोनों राजकुमारों ने यह देखा कि दो पंडुक युगल स्वर में गीत गाते हुए यह कह रहे थे कि जो उनके सिर को खाएगा वह राजा होगा, फलेगा-फूलेगा और जो व्यक्ति उनके शरीर का माँस खाएगा वह कंटीला और कंगाल होगा। प्रातः काल दोनों राजकुमार भूख से व्याकुल हो गये। ज्येष्ठ राजकुमार ने दोनों पंडुकों का शिकार कर उसके माँस को खाकर अपनी क्षुधा शांत कर ली किन्तु कनिष्ठ राजकुमार के लिए कोई विकल्प शेष न था। इसीलिए उसने पंडुक के सिर को पकाकर खा लिया। इसके बाद जल की तलाश में दोनों भाई जिन दिशाओं में गए उस ओर क्रमशः पक्षी के कहेनुसार एक ओर वसंत, फल-फूल से सुशोभित प्रकृति तथा दूसरी ओर पतझड़ का सूखापन छा गया और इस तरह से बड़े राजकुमार का नाम शीत और और छोटे का नाम वसंत पड़ा। इस किवदंती के आधार पर चाय श्रमिक समाज में शिशिर तथा वसंत ऋतुओं के आगमन संबंधी मिथक प्रचलित हैं। इस मिथकीय कथा में पक्षियों के माध्यम से मानव जीवन के कटु यथार्थ की ओर इंगित किया गया है। इसके साथ ही चाय जनगोष्ठी में प्रचलित अंधविश्वास व बलि प्रथा तथा माँसाहार का भी आभास मिलता है। दोनों राजकुमारों को अत्यंत प्रतीकात्मक ढंग से प्रकृति के दोनों रूपों यथा- पतझड़ और वसंत के प्रतीक के रूप में प्रस्तुत किया गया है। समाजभाषिक दृष्टि से अनुशीलन हेतु इस मिथकीय पौराणिक कथा के कुछ अंश को लिया जा रहा है-

अनुशीलन 1:

"चइखेर पानीये लोर-झोर होइके राजा ओई खुइनटाई राणीकेर कोपाले एकटा टिका लागाई दिलो आर उवार लोगे-लोगे राणीकेर बेमार भाल होई गेलो। राजकुमार दुझन निजेर राज्यकेर सीमा पार होइके बोड़ो जंघले ढुके गेलो। इरोकोमे राईत हुवा खातिर एकटा गाछेर निचे ओरा थाकते लिलो। ओई गाछटार उपरे एक जोड़ा पारकि/पाड़कि रहे। पाखुड़ दुटा एकटा बातके सुर लगाइके गाहते रहे- 'जे हामदेर माथा खाबेक उ राजा होबेक, फूले-फले जातिस्कार होबेक आरु जोनटा हामदेर गातटा खाबेक उ कांगाल होबेक, शुकना आर लांगटा होबेक।"[3]

आशय यह है कि जब कसाई कुत्ते को मारकर उसका रक्त ले आता है तो वह समय राजा के लिए अत्यंत हृदय विदारक था। राजा अश्रुपूरित मन से रानी को रक्त का तिलक लगा देते हैं और उसी क्षण रानी की बीमारी भी ठीक हो जाती है। उधर दोनों राजकुमार अपने राज्य की सीमा से दूर वन की ओर बढ़ गये। रात्रि में विश्राम के लिए दोनों भाई एक वृक्ष के नीचे ठहरते हैं। उसी वृक्ष पर एक पंडुक युगल गीति शैली में एक पंक्ति

दोहरा रहे थे कि 'जो हमारे सिर को खाएगा वह राजा होगा, फल-फूल से लदे पेड़ की भाँति समृद्ध होगा और जो हमारे शरीर का सेवन करेगा वह कंगाल होगा, सूखा और नंगा होगा।'

उक्त कथा की मूल भाषा असमिया भाषा से प्रभावित सादरी है जिसमें भिन्न भाषाई शब्दों के प्रयोग को देखा जा सकता है। जैसे- 'दिलो' (दिया), 'आर' (और), 'निजेर' (अपना), 'बोड़ो' (बड़ा), 'ढुके' (घुसना), 'गेलो' (गया), 'गाछेर' (पेड़ के), 'ओरा' (वे), 'थाकते' (रहने), 'लिलो' (लिया), 'शुकना' (सूखा हुआ), 'कांगाल' (कंगाल) आदि सभी बांग्ला भाषा में प्रयुक्त होने वाले शब्द हैं। इसके अलावा 'टिका' (टीका) भोजपुरी का शब्द है जिसका अर्थ है- 'तिलक लगाना'। इसी क्रम में कुछ असमिया के शब्दों का भी प्रयोग हुआ है, यथा- 'हुवा' (होना), 'दुटा' (दो), 'जातिष्कार' (आच्छादित), 'गातटा' (शरीर को) आदि। ध्यातव्य है कि 'गातटा' शब्द में केवल 'गात' अर्थात् 'शरीर' शब्द ही असमिया भाषा का है। इसमें प्रयुक्त कारक चिह्न 'टा' बांग्ला तथा सादरी भाषा का है। साथ ही यहाँ कुछ ऐसे भी शब्दों का प्रयोग हुआ है जो एकाधिक भाषाओं में प्रयुक्त होते हैं। उदाहरण के लिए 'बेमार' (बीमार), 'भाल' (अच्छा), 'जंघले' (जंगल में), 'उपरे' (ऊपर), 'लांगटा' (नंगा) आदि सभी शब्द बांग्ला के साथ-साथ असमिया भाषा में व्यवहृत होते हैं। इसी तरह से 'माथा' और 'गाछ' ये दोनों शब्द बांगला और भोजपुरी भाषा में क्रमशः 'सिर' और 'पेड़' के अर्थ में प्रयुक्त होते हैं तथा 'खातिर' (के लिए) मूलतः भोजपुरी का शब्द है। बागानिया भाषा में प्रयुक्त ये सभी भिन्न भाषाओं के शब्द कोड-मिश्रण के साथ ही बहुभाषिकता की विशेषता का बोध कराते हैं। उक्त कथा में पुनरुक्तियों का भी प्रयोग हुआ है। जैसे- 'लोगे-लोगे' तथा 'लोर-झोर'। इसमें 'लोगे-लोगे' (तुरंत) में एक ही शब्द की दो बार आवृत्ति हुई है जो भाषा में क्रिया विशेषण के रूप में प्रयुक्त हुआ है। अतः यह पूर्ण पुनरुक्ति की स्थिति है किन्तु 'लोर-झोर' में 'लोर' भोजपुरी भाषा का शब्द है जिसका अर्थ है- आँसू जबकि 'झोर' शब्द अतिरिक्त के अर्थ में यहाँ प्रयोग किया गया है। 'झोर' शब्द का कोई कोशगत अर्थ नहीं होता। इसीलिए इसे आंशिक पुनरुक्ति कहा जाएगा। इसके साथ ही यहाँ विभिन्न क्षेत्र की प्रयुक्तियों का प्रयोग हुआ है। उदाहरण के तौर पर 'गात' तथा 'माथा' शरीर विषयक और 'राजा', 'रानी', 'राजकुमार' आदि राजतंत्र संबंधी प्रयुक्तियाँ हैं। उद्धृत कथा-अंश की पंक्तियों में भाषा के उच्च और निम्न कोड का प्रयोग हुआ है। जैसे- 'चइखेर' (आँखों का), 'होइके' (होकर), 'खुइनटाई' (खून से), 'राईत' (रात), 'गाहते' (गाते) ये शब्द निम्न कोड के रूप में प्रयुक्त हुए हैं। इनका मानक रूप क्रमशः 'चोखेर', 'होके', 'खूनटा', 'रात' तथा 'गाते' होगा। सादरी भाषा में ये शब्द इसी रूप में प्रयुक्त होते हैं। इसके अलावा 'सीमा', 'बातके', 'सुर' आदि उच्च कोड के संस्कृतनिष्ठ शब्द हैं। यहाँ भाषा के

उच्च और निम्न कोड के प्रयोग भाषाद्वैत की प्रवृत्ति को दर्शाते हैं। ग़ौरतलब है कि सादरी भाषा में असमिया भाषा के प्रभाव के कारण कारक चिह्न मूल शब्द के साथ श्लिष्ट रूप में प्रयुक्त होते हैं। इसी कारण असमिया सादरी का यह रूप योगात्मक है। प्रोक्ति के स्तर पर देखा जाए तो वृक्ष की शाखा पर बैठे दोनों पंडुकों द्वारा गीतात्मक शैली में कही गयी उक्तियाँ द्वयाभिमुख स्थिर संलाप मानी जाएँगी क्योंकि कथा में दोनों पंडुक गीत के रूप में अपनी बात कह रहे होते हैं और राजकुमार की उपस्थिति वहाँ श्रोता के रूप में है।

अनुशीलन 2:

"थोकाई थाका राजकुमार दुझन घुमाई उठार लोगे-लोगे ओदेर पेट भुके आकुल-बाकुल कोरते धरल। खावार बोस्तु कोनो नाई देखके ओरा पाखुड़ दुटाकेई मोराल। भुकेर ज्वाला सहते नाई पारेके बोड़ो राजकुमारे पाड़कि दुटार मांस एकलाई खाई दिलो। छोटो राजकुमारे उपाई नाई पाईके पाड़कि दुटार माथा गिला आगुने पुड़ाई खाईके भुक निवारण करल। मांस खाईके पियास लागा खातिर बोड़ो राजकुमार पानी खुजते गेल। किन्तु उ जोनदिगे गेलो उदिगेई शुकना होई गेलो। गाछ-लताकेर पाता पाकेके झड़ते लागल। नदी-नाला सब शुकाई गेल। शीतेर प्रचंड हुरहुरीया हावा चलते लागल।"[4]

कथा की उपर्युक्त पंक्तियाँ उस समय से संबंधित हैं जब दोनों राजकुमार थक-हारकर जंगल में विश्राम कर रहे थे। नींद से जगने के पश्चात् वे भूख से व्याकुल हो गये। पेट की अग्नि को शांत करने के लिए दोनों पंडुकों को मारकर उनके शरीर के माँस को ज्येष्ठ राजकुमार ने खा लिया परन्तु छोटे राजकुमार के लिए कोई विकल्प नहीं बचा। अतः अंत में छोटे राजकुमार ने उन पंडुकों के सिर को खाकर ही अपनी क्षुधा शांत की। माँस खाने के बाद ज्येष्ठ राजकुमार पानी की तलाश में निकल पड़ा। वह जिस रास्ते से गया उस ओर का समूचा स्थान सूखता चला गया। वृक्षों और लताओं के पत्ते पीले होकर झड़ने लगे। नदी-नाले सभी सूख गये। शीत की प्रचंड ठंडी हवा चलने लगी।

मिथकीय कथा की उद्धृत पंक्तियों में शब्द के स्तर पर देखें तो यहाँ 'थकाई', 'झड़ते', 'चलते', 'सब', 'सहते' आदि हिंदी के शब्द प्रयुक्त हुए हैं। ध्यातव्य है कि 'थकाई' शब्द मूल रूप से हिंदी के 'थका' शब्द का सादरी रूप है। इसमें 'ई' प्रत्यय को जोड़कर 'थकना' क्रिया के संदर्भ में इसका प्रयोग हुआ है। इसके साथ ही 'थाका' (रहना), 'घुमाई' (सोना), 'भुके' (भूख से), 'खावार' (खाने के लिए), 'बोड़ो' (बड़ा), 'छोटो' (छोटा), 'दिलो' (दिया), 'आगुने' (आग में), 'खुजते' (खोजना), 'गेलो' (गया), 'शुकना' (सूखा हुआ), 'पाता' (पत्ता)

आदि सभी बांग्ला भाषा में प्रयुक्त होने वाले शब्दों का प्रयोग हुआ है। इसके अलावा असमिया, भोजपुरी तथा संस्कृतनिष्ठ शब्दों का यथास्थान प्रयोग हुआ है। उदाहरण के तौर पर देखा जाए तो 'खाई' (खाना), 'शुकाई' (हुकाई अर्थात् सूखना) असमिया भाषा के शब्द हैं तथा 'पियास' (प्यास), 'लागल' (लगा) भोजपुरी शब्द हैं। इसमें 'पियास' को हिंदी के 'प्यास' शब्द का निम्न कोड कहा जा सकता है। ठीक इसी प्रकार 'हावा' शब्द भाषा का निम्न कोड है जिसका मानक रूप 'हवा' है। इस दृष्टि से हम यहाँ भाषाद्वैत की विशेषता स्पष्टतः देख सकते हैं। इसके अतिरिक्त 'ज्वाला', 'मांस', 'निवारण' आदि संस्कृतनिष्ठ शब्दों का भी प्रयोग हुआ है। यहाँ कुछ ऐसे भी शब्दों का प्रयोग हुआ है जो एकाधिक भाषाओं में व्यवहृत होते हैं। जैसे- 'बस्तु' (वस्तु), 'उठार' (उठना/ जगना), 'भुक' (भूख), 'पुड़ाई' (जलाकर) आदि असमिया के साथ-साथ बांग्ला भाषा में भी सामान अर्थों में प्रयुक्त होते हैं। इस तरह बागानिया भाषा में प्रचलित इस लोककथा के वाक्यों में अलग-अलग स्थानों पर हिंदी, असमिया, बांग्ला, संस्कृत, भोजपुरी आदि भिन्न भाषाओं के शब्दों के प्रयोग से कोड-मिश्रण और बहुभाषिकता की प्रवृत्ति सहज दृष्टव्य है। इसके अलावा विभिन्न क्षेत्रों से संबंधित प्रयुक्तियों का भी प्रयोग हुआ है। यथा- 'पेट', 'माथा' (सिर) शरीर के रचना विज्ञान संबंधी, 'पानी', 'आगुन' (अग्नि), 'हावा' (हवा) आदि पंचतत्वों से संबंधित प्रयुक्तियाँ हैं तथा 'गाछ' (वृक्ष), 'लता', 'पाता' (पत्ता) ये सभी वनस्पति विषयक प्रयुक्तियाँ हैं। पुनरुक्तियों के स्तर पर देखा जाए तो इस कथांश में पूर्ण तथा आंशिक पुनरुक्ति का प्रयोग हुआ है। जैसे- 'लोगे-लोगे' (तुरंत) में 'लोगे' शब्द की दो बार आवृति हुई है। अतः यह पूर्ण पुनरुक्ति की स्थिति है तथा 'आकुल-बाकुल' में आंशिक पुनरुक्ति है। कारण कि 'आकुल' शब्द का कोशगत अर्थ है किन्तु 'बाकुल' शब्द निरर्थक है और अतिरिक्त के अर्थ में प्रयुक्त हुआ है। प्रस्तुत अंश की कुछ पंक्तियों में टॉपिकीकरण की प्रवृत्ति भी देखी जा सकती है। ऐसा वाक्य के किसी एक शब्द पर विशेष बल देने के उद्देश्य से किया गया है। उदाहरण के लिए 'खावार बोस्तु कोनो नाई देखके ओरा पाखुड़ दुटाकेई मोराल', 'भुकेर ज्वाला सहते नाई पारेके बोड़ो राजकुमारे पाड़कि दुटार मांस एकलाई खाई दिलो' तथा 'मांस खाईके पियास लागा खातिर बोड़ो राजकुमार पानी खुजते गेल' आदि वाक्यों को देखा जा सकता है। इनमें से प्रथम वाक्य में 'खावार बोस्तु' की अनुपलब्धि पर अधिक बल देने हेतु इसे कर्ता के स्थान पर रखा गया है। इसी क्रम में दूसरे और तीसरे वाक्य में क्रमशः 'भुकेर ज्वाला' तथा 'मांस खाईके पियास लगा' पर विशेष महत्व देने हेतु इन्हें वाक्य के प्रारंभ में कर्ता के स्थान पर रखा गया है। अर्थात् बागानिया भाषा की सामान्य वाक्य-संरचना (कर्ता+ कर्म+ क्रिया) के आधार पर इन तीनों वाक्यों को क्रमशः'ओरा कोनो खावार बोस्तु नाई देखके पाखुड़ दुटाकेई मोराल', 'बोड़ो राजकुमारे

भुकेर ज्वाला सहते नाई पारेके पाड़कि दुटार मांस एकलाई खाई दिलो' तथा 'बोड़ो राजकुमार मांस खाईके पियास लागा खातिर पानी खुजते गेल' के रूप में होना चाहिए।

6.1.2 धार्मिक कथाएँ

* *'श्री श्री करम देवतार काहानी' (श्री श्री करम देवता की कथा)*

करम पर्व चाय जनगोष्ठी का जातीय उत्सव है। इस पर्व में लगभग सभी श्रमिक समुदाय सपरिवार सश्रद्ध शामिल होते हैं। ग़ौरतलब है कि चाय जनगोष्ठी में जातीय समुदाय के अनुरूप *'करम कथा'* में भिन्नता मौजूद है। इस कथा का वाचन भाद्र महीने के शुक्ल पक्ष की एकादशी तिथि को आयोजित करम पूजा अथवा पर्व के दौरान होता है। यह कथा अयोध्या नगरी के एक अति समृद्ध सौदागर तथा उसकी पत्नी के जीवन-प्रसंग से प्रारंभ होती है। दंपत्ति सौदागर की ईश्वर पर विशेष आस्था थी। ईश्वर की आराधना से ही दोनों अपनी दिनचर्या की शुरुआत करते थे। सौदागर ने अपने घर के प्रांगण में ही तरह-तरह के फूलों का एक बड़ा बगीचा लगवाया था। वहीं से प्रातः फूल तोड़कर वह ईश्वर के श्रीचरणों में अर्पित किया करता था। धन-संपत्ति से समृद्ध होने के बावजूद संतान सुख से वंचित होने के कारण सौदागर और उसकी पत्नी के जीवन में उत्साह न था। एक दिन स्वर्ग लोक से अवतरित एक भौंरे ने सौदागर की बगिया को देखा। उसके मन में फूलों से रसपान करने की तीव्र आकांक्षा जगी। उसके बाद से भौरा नितदिन स्वर्ग से आकर अपनी क्षुधा की तृप्ति किया करता था। प्रतिदिन की इस शैली को देखकर भौंरे की पत्नी के मन में भी सौदागर के बगीचे से फूलों का रसपान करने की इच्छा हुई। अततः उसने पृथ्वी पर जाकर अपने पसंदीदा फूलों का रसपान किया और लौटते हुए एक फूल स्वर्ग को ले गयी। वह समय भाद्र महीने का था और स्वर्ग लोक की कुछ अप्सराएँ करम राजा की आराधना में लीन थीं। उस समय भँवरी द्वारा ले जाये गये फूल के निर्मल सुगंध से स्वर्ग लोक की सभी व्रती अप्सराएँ मुग्ध हो गयीं। और, वे भँवरी के साथ करम राजा के पूजन हेतु फूल लेने सौदागर के बगीचे में पहुँचीं। इसके बाद सौदागर से वार्तालाप के दौरान उनलोगों ने सौदागर को संतति की प्राप्ति हेतु करम पूजा के आयोजन की सलाह दी तथा पूजन विधि को सविस्तार बताया। तब से लेकर प्रति वर्ष सौदागर अपनी पत्नी के साथ भाद्र महीने की एकादशी को विधिवत करम देवता की पूजा करने लगा। करम देवता की अनुकंपा से कुछ ही समय पश्चात् उन्हें दो तेजस्वी पुत्रों की प्राप्ति हुई। उन दोनों भाईयों का नामकरण कर्मा और धर्मा हुआ। समय के साथ दोनों भाई वयस्क हुए

और गृहस्थी बसायी। कर्मा का अधिकतर समय व्यापार-वाणिज्य के काम-काज में बीतता था जबकि धर्मा गाँव में ही खेती-बाड़ी के साथ धर्म-कर्म के काम में संग्लन रहता था।

दूर देश से व्यापार का काम संपन्न कर कर्मा जब अपने घर लौटता है, उस दिन धर्मा अपने घर-आँगन में समस्त गाँववासियों के साथ करम देव की पूजा-अर्चना में व्यस्त था। अतः भाई के स्वागत में धर्मा के उपस्थित न होने के कारण कर्मा अत्यंत क्रोधित होता है और करम देवता का अपमान करता है। इससे वह करम देवता के प्रकोप का भागी बनता है और उसकी सारी सुख-संपत्ति धीरे-धीरे समाप्त होने लगती है। कुछ ही दिनों के भीतर कर्मा बिल्कुल कंगाल हो जाता है। फिर उसे अपनी गलती का भान होता है और पश्चाताप के लिए वह करम देवता की तलाश में निकल पड़ता है। वन, नदी, पहाड़ों में भटकते हुए कर्मा का अनेक विचित्र घटनाओं से साक्षात्कार होता है। भूख-प्यास से व्याकुल कर्मा एक जामुन के पेड़ से फल तोड़कर खाना चाहता है किन्तु उस पेड़ के सभी फलों में कीड़े लगे होते हैं। उस समय कर्मा को पुनः अपराधबोध होता है और वह कहता है कि करम देव के अभिशाप के कारण ही उसे अपनी क्षुधा को शांत करने के लिए एक अच्छा जामुन तक नसीब नहीं हो पा रहा है। उस दौरान जामुन का पेड़ कर्मा से कहता है कि जब तुम्हें करम देवता के दर्शन हों तब उनसे मेरी इस समस्या का भी समाधान पूछकर बताना। इसी तरह से कर्मा को रास्ते में पीपल-बेर के वृक्ष, तालाब, हाथी, घोड़ा, सर्प, गाय आदि सभी से भेंट होती है और कर्मा उन सभी की समस्याओं को सुनकर अपने गंतव्य की ओर बढ़ जाता है। यात्रा में आने वाली बाधाओं के द्वारा करम देवता कर्मा के धैर्य और आस्था की परीक्षा लेते हैं तथा अंत में उसे दर्शन देकर कृतार्थ करते हैं। कर्मा अपने सभी अपराधों के लिए अंतर्मन से देव से क्षमा याचना करता है तथा यात्रा में मिलने वाले सभी वृक्षों और प्राणियों के कष्टों के निवारण के लिए प्रार्थना करता है। करम देव के बताये अनुसार वह पुनः घर को लौटते हुए जामुन, पीपल, बेर आदि के वृक्ष, तालाब, हाथी, घोड़ा, सर्प, गाय आदि की समस्याओं का समाधान बताता है। इसके बाद अपने घर आकर विधिवत करम पूजा का आयोजन करता है। इस प्रकार प्रत्येक वर्ष करम देव के पूजन-अर्चन से कर्मा को अपने सभी कष्टों से निवृत्ति मिल जाती है और उसका परिवार पुनः धन-धान्य से समृद्ध हो जाता है।

कुलमिलाकर करम कथा में करम राजा अर्थात् करम देवता के महात्म्य तथा पूजन विधि का उल्लेख मिलता है। चाय जनगोष्ठी में कमोबेश भिन्नता के साथ प्रचलित इस व्रत कथा में मूल रूप से जीवन में कर्म और धर्म के सामंजस्य को दर्शाया गया है। कर्मा और धर्मा दोनों भाई क्रमशः कर्म और धर्म के मार्ग का प्रतिनिधित्व करते हैं। कर्मा अपने कर्म पथ पर चलते हुए जब ईश्वर के प्रति आस्थावान बनता है तो उसके जीवन से सभी

कष्ट समाप्त हो जाते हैं। इसीलिए चाय श्रमिक अपने जीवन के तमाम संघर्षों, कष्टों के बावजूद आशान्वित होकर करम देव के प्रति आस्था और विश्वास दिखाते हैं। करम कथा में उद्धृत नाना प्रसंगों का अनुसरण कर चाय श्रमिक भी अपने जीवन में संतान सुख, खुशहाल परिवार, धन-समृद्धि से परिपूर्ण जीवन तथा शारीरिक कष्ट से निवृत्ति आदि की कामना से करम पूजा का विधिवत आयोजन कर करम कथा का वाचन करते हैं। इस कथा में ईश्वरीय अनुकंपा से पेड़-पौधे, जीव-जंतु, मनुष्य आदि सभी की पीड़ा के निवारण तथा सुखी जीवन का मर्म निहित है। समाजभाषावैज्ञानिक दृष्टि से अध्ययन हेतु 'श्री श्री करम देव की कथा' के कुछ अंशों को यहाँ प्रस्तुत किया जा रहा है-

अनुशीलन 1:

"बहुत दिनके आघे अयोध्या नगरमें एकटा सदागर रहत रहे। सदागरके निजर स्त्रीके बाहिरे कोई नाई रहे किन्तु सदागरके बेपार-वाणिज्य, धन-संपत्ति आर माटि-बाड़ी, खेति-पथार बहुत बेसि रहे। घरमें सबदिन दास-दासी नोकर-चाकर बहुते काम बन करके जीविका निर्वाह करत रहे। सदागर आर उवार स्त्री दुई जनेई देव भक्त रहे। उसब दुनोजन सबदिन फजिरे चाइजे भगवानके आराधना नाई करेक खावा-दावा आनकि कोनो कामेई नाई करत रहे। सदागर के पूजा करेक आसते सबदिन फूलके दरकार होइलो, ओई करने सदागर एकटा बहुत डांगोर फूलबारी बनालेई। पृथिवीत जेतना फूल आहे सदागर खोइज-खोइज के जेतना फूल पालेई सदागर निजोर बारी में लागालेई आर फूलबारीटा साफा करके राखेक आसते काम कोरा मानुस राईख रहे।"[5]

अर्थात् यह बहुत दिनों पहले की बात है कि अयोध्या नगर में एक सौदागर रहता था। उसका इस संसार में अपनी पत्नी के अलावा अन्य कोई नहीं था परंतु उसका परिवार व्यापार-वाणिज्य, खेती-बाड़ी, जमीन, धन-संपत्ति आदि से समृद्ध था। उसके घर में सदैव दास-दासी, नौकर-चाकर काम-काज किया करते थे और उससे प्राप्त पारिश्रमिक से अपना जीवन-निर्वाह किया करते थे। सौदागर और उसकी पत्नी दोनों ही देव-भक्त थे। प्रतिदिन प्रातः काल ईश्वर की आराधना किये बिना दोनों अन्न-जल यहाँ तक कि किसी काम का शुभारंभ नहीं करते थे। सौदागर को नित प्रति पूजा-अर्चना हेतु फूलों की आवश्यकता पड़ती थी इसीलिए उसने एक बड़ी फुलवारी लगायी। पृथ्वी पर जितने अलग-अलग किस्म के फूल हैं उन्हें ढूँढकर अपने बागीचे में लगाया तथा उसके रख-रखाव के लिए एक व्यक्ति को नियुक्त किया।

व्रत कथा की उद्धृत पंक्तियाँ बागानिया भाषा में हैं किन्तु इस कथा के वाक्यों में अलग-अलग भाषाई शब्दों का व्यवहार हुआ है। जैसे- 'सदागर' (सौदागर), 'निजोर' (अपना), 'बाहिरे' (इतर), 'बेपार' (व्यापार), 'बेसि' (ज्यादा), 'आनकि' (यहाँ तक कि), 'कामेई' (काम ही), 'नाई' (नहीं), 'दोरकार' (आवश्यकता), 'डांगोर' (बड़ा), 'पृथिवीत' (पृथ्वी में), 'पालेई' (मिलने पर), 'कोरा' (करना) आदि असमिया भाषा में प्रयुक्त होने वाले शब्द हैं। इसके अलावा कुछ बांग्ला तथा भोजपुरी के शब्दों का भी प्रयोग हुआ है। मसलन, 'चाइजे' (चाहता है कि) बांग्ला भाषा में प्रयुक्त होने वाला शब्द है तथा 'रहत' (रहना), 'फजिरे' (सुबह), 'जेतना' (जितना) आदि शब्द भोजपुरी भाषा के हैं। व्रत कथा की इन पंक्तियों में हिंदी के कुछ मानक शब्द भी प्रयुक्त हुए हैं। जैसे- 'कोई', 'काम', 'करके' आदि तथा कई संस्कृतनिष्ठ शब्दों का भी प्रयोग हुआ है, यथा- 'बहुत', 'जीविका', 'निर्वाह', 'भक्त', 'आराधना', 'पूजा', 'मानुस' आदि। कथा की भाषा में प्रयुक्त ये भिन्न भाषाई शब्द कोड-मिश्रण के साथ-साथ बहुभाषिकता की विशेषता का बोध कराते हैं। इसके अतिरिक्त कथा के वाक्यों में कई स्थानों पर भाषा के निम्न कोड के शब्दों का भी प्रयोग हुआ है। उदाहरण के लिए 'आघे', 'कोनो' (कोई), 'फूलबारी' तथा 'साफा' शब्दों को देखा जा सकता है। इन शब्दों का मानक रूप क्रमशः 'आगे', 'कउनो' (भोजपुरी शब्द), 'फुलवारी' तथा 'साफ' है। अतः यहाँ भाषाद्वैत की प्रवृत्ति मौजूद है। भाषा को रोचक बनाने के लिए कई स्थानों पर पुनरुक्तियों का भी प्रयोग हुआ है। मसलन, 'नौकर-चाकर', 'बेपार-वाणिज्य', 'धन-संपत्ति', 'खावा-दावा' तथा 'खोइज-खोइज' आदि को शब्दों को देखा जा सकता है। इनमें 'नौकर-चाकर' (फारसी-तुर्की), 'बेपार-वाणिज्य' (असमिया-हिंदी), 'धन-संपत्ति' (हिंदी-संस्कृत) दोनों शब्दों का अर्थ तो एक ही है किन्तु ये शब्द दो अलग-अलग भाषाओं के हैं। अतः इसे आधिक्यबोधक पुनरुक्ति कहा जाएगा लेकिन 'खावा-दावा' और 'खोइज-खोइज' में क्रमशः आंशिक और पूर्ण पुनरुक्ति है क्योंकि 'खावा-दावा' मूल रूप से बांग्ला भाषा में 'खाने-पीने' के अर्थ में प्रयुक्त होता है। इसमें 'खावा' शब्द का बांग्ला में अर्थ है 'खाना' किन्तु 'दावा' शब्द का कोई कोशगत अर्थ नहीं है। यह अतिरिक्त के संदर्भ में प्रयुक्त हुआ है। वहीं 'खोइज-खोइज' सादरी भाषा में 'खोज' शब्द का परिवर्तित रूप है। इसके अलावा कथा के अंश में विभिन्न क्षेत्रों की प्रयुक्तियों का भी प्रयोग दृष्टव्य है। जैसे- 'अयोध्या', 'देव', 'भक्त', 'आराधना', 'पूजा' आदि हिंदू धर्म विषयक प्रयुक्तियाँ हैं, 'धन', 'संपत्ति', 'माटि-बारी' (माटी-बाड़ी), 'खेती-पथार' (खेत-खलिहान) आदि ऐश्वर्य-समृद्धि से संबंधित तथा 'दास', 'दासी', 'नौकर', 'चाकर' आदि सामंती व्यवस्था से संबंधित प्रयुक्तियाँ हैं।

अनुशीलन 2:

"बिधिमते लोरा दुजनर जात कर्म शेष कोरि अतिथि-आलोहि, ब्राह्मण, गरीब सब फाले खाना-पीना खियालेइ आरो बहुत धन दलाइ, आरो पुरुहित के आनके नामकरण करकेई कर्म आरो धर्म नाम से जन्म पुवातेइ नाम राखलेई कर्मा आरो धर्मा। दिने-दिने कर्मा आरो धर्मा बाढ़क शुरू करलेइ। शादी करेक उमर होलेइ तोखोन निजोर स्वजाति कुटुम दुजनके कन्या देइखके दुनो जन के निजोर समाजके नियम अनुसारे शादी कोइर देलई। सदागरके लोरा जनम होउंल पिछे सेइ श्री करम देवतार पूजा प्रति बछरे भाद्र मास शुक्ल पक्ष एकादशी ब्रत पालन कोइरलेइ। दिनके पीछे दिनगिला उरोकोम चलतरहे। सदागर आरो सदागरिन दुनो देहावसान होइ गेल। कर्मा आरो धर्मा मिलके बापके श्राद्ध कर्म करेक गाँउ राइज, कुटुम सबके हाकाई भोज खोवाई, दुखिया मानुसगिलाके धन दान कोरलेई।"[6]

भाव यह है कि सौदागर ने अपने दोनों पुत्रों के विधिवत जातकर्म संस्कार का आयोजन कर अतिथियों, संबंधियों, ब्राह्मणों, दरिद्रों आदि सभी को प्रीति-भोज करवाया और अंत में धन का दान भी किया। कर्म और धर्म के मार्ग से प्रेरित होकर पुरोहित द्वारा दोनों संतानों का नामकरण कर्मा और धर्मा किया गया। समय के साथ कर्मा-धर्मा दोनों भाई बड़े हुए। कुछ ही दिनों बाद सौदागर ने स्वजातीय परिवारों की कन्याओं से उनका विवाह करवा दिया गया। सौदागर अपने पुत्रों के जन्मोपरांत से ही प्रति वर्ष भाद्र महीने की एकादशी तिथि को करम देव की विधिवत पूजा और उपवास करता था। इसी तरह वर्षों बीत गये और सौदागर तथा उसकी पत्नी का देहावसान हुआ। कर्मा-धर्मा दोनों भाइयों ने मिलकर अपने माता-पिता की अंत्येष्टि क्रिया को संपन्न कर अपने दायित्वों का निर्वहन किया और समस्त गाँववासियों, कुटुंब आदि को श्राद्ध भोज खिलाया। इस अवसर पर दोनों भाइयों ने जरूरतमंद व्यक्तियों को धन-दान देकर उनकी सहायता की। कथा के इन वाक्यों से इस बात का सहज बोध हो जाता है कि चाय जनगोष्ठी में विभिन्न संस्कारगत अवसरों पर परंपरागत रीति-रिवाजों का अनुसरण किया जाता है। इसके साथ ही इस समाज में वर्ग और वर्ण वयवस्था भी पुरजोर है।

उपर्युक्त कथा के वाक्यों की मूल भाषा चाय बागानों में बोली जाने वाली असमिया भाषा से प्रभावित सादरी है किन्तु इनमें भिन्न भाषाई शब्दों के प्रयोग से कोड-मिश्रण के साथ-साथ बहुभाषिकता की विशेषता सहज ही दृष्टव्य है। उदाहरण के तौर पर वाक्यों में प्रयुक्त विभिन्न शब्द जैसे- 'बिधिमोते' (विधिवत), 'लोरा' (लड़का), 'कोरि' (करके), 'निजोर' (अपना), 'पिछे' (बाद में), 'गाँउ' (गाँव), 'राइज' (समाज के लोग),

'दुखिया' (दरिद्र) आदि मूलतः असमिया भाषा में प्रयुक्त होने वाले शब्द हैं। इसके साथ ही 'मास' (महीना) शब्द बांग्ला भाषा का तथा 'दुनो' (दोनों), 'सबके' (सभी को), 'भोज' (भोजन) आदि भोजपुरी भाषा के शब्द हैं। इसके अलावा हिंदी के मानक तथा संस्कृतनिष्ठ शब्दों का भी प्रयोग कथा के अंश में हुआ है। मसलन- 'शेष', 'गरीब', 'सब', 'बहुत', 'शुरू', 'स्वजाति', 'प्रति', 'पालन', 'देहावसान', 'कर्म', 'धर्म' आदि। इन्हें भाषा का उच्च कोड कहा जा सकता है। इसी क्रम में कथा की भाषा में कुछ निम्न कोड के शब्दों का भी प्रयोग हुआ है। जैसे- 'करकेई' (करके ही), 'कुटुम' (कुटुंब), 'जनम' (जन्म), 'उमर' (उम्र), 'ब्रत' (व्रत) आदि। अतः यहाँ भाषा के निम्न कोड और उच्च कोड के शब्दों के एकसाथ प्रयोग से भाषाद्वैत की स्थिति का बोध होता है। इसके साथ ही वाक्यों में प्रयुक्त 'पुरुहित', 'अनुसारे' जैसे शब्दों में भाषाई विकल्पन की स्थिति है जो असमिया के प्रभाव के कारण उत्पन्न हुई है। इन शब्दों का मानक रूप 'पुरोहित' और 'अनुसार' होगा कारण कि असमिया भाषा में 'ओ' ध्वनि का उच्चारण 'उ' होता है तथा कारक चिह्न मूल शब्द के साथ श्लिष्ट रूप में प्रयुक्त होते हैं। कथा की भाषा को और अधिक रोचक बनाने के लिए एकाध स्थानों पर पुनरुक्तियों का भी प्रयोग हुआ है। जैसे- 'अतिथि-आलहि' में 'अतिथि' शब्द संस्कृत का है तो वहीं 'आलहि' शब्द असमिया भाषा का है किन्तु ये दोनों ही भिन्न भाषाई शब्द एक ही अर्थ 'मेहमान' के लिए प्रयुक्त हुए हैं। इसीलिए इसे अधिक्य्बोधक पुनरुक्ति कहा जाएगा। इसके अलावा 'दिने-दिने' में पूर्ण पुनरुक्ति है क्योंकि यहाँ 'दिने' शब्द की दो बार आवृति हुई है जिसका प्रयोग 'अधिकता' के संदर्भ में हुआ है। प्रयुक्ति के स्तर पर देखा जाए तो उद्धृत अंश में अलग-अलग क्षेत्रों के शब्दों का प्रयोग हुआ है। जैसे- 'जन्म', 'जात कर्म', 'नामकरण', 'शादी', 'देहावसान', 'श्राद्ध' आदि संस्कारगत प्रयुक्तियाँ हैं। इसके अतिरिक्त 'शुक्ल पक्ष', 'एकादशी', 'ब्रत/ व्रत', 'पूजा' आदि हिंदू धर्म से संबंधित तथा 'ब्राह्मण', 'पुरोहित', 'गरीब', 'दुखिया' आदि सामाजिक स्तर-भेद से संबंधित प्रयुक्तियाँ हैं। उद्धृत अंश की पंक्तियों में टॉपिकीकरण के अंतर्गत यथास्थान किसी एक शब्द पर विशेष बल देने के लिए उस शब्द को वाक्य-संरचना के नियत स्थान से स्थानांतरित कर दिया गया है। उदाहरण के लिए 'बिधिमते लोरा दुजनर जात कर्म शेष कोरि अतिथि-आलोहि, ब्राह्मण, गरीब सब फाले खाना-पीना खियालेइ आरो बहुत धन दलाइ, आरो पुरुहित के आनके नामकरण करकेई कर्म आरो धर्म नाम से जन्म पुवातेइ नाम राखलेई कर्मा आरो धर्मा' तथा 'दिने-दिने कर्मा आरो धर्मा बाढ़क शुरू करलेइ' पंक्तियों को देख सकते हैं। इसमें प्रथम पंक्ति में 'बिधिमोते' अर्थात् विधिवत शब्द पर बल देने के लिए उसे वाक्य के प्रारंभ में कर्ता के स्थान पर रखा गया है तथा दूसरी पंक्ति में 'दिने-दिने' अर्थात् समय के परिवर्तन पर बल देने के लिए उसे वाक्य

के प्रारंभ में रख दिया गया है। इन दोनों ही पंक्तियों को बागानिया भाषा की सामान्य वाक्य-संरचना (कर्ता+कर्म+ क्रिया) के अनुसार क्रमशः 'लोरा दुजनर जात कर्म बिधिमते शेष कोरि अतिथि-आलोहि, ब्राह्मण, गरीब सब फाले खाना-पीना खियालेइ आरो बहुत धन दलाइ, आरो पुरुहित के आनके नामकरण करकेई कर्म आरो धर्म नाम से जन्म पुवातेइ नाम राखलेई कर्मा आरो धर्मा।' तथा 'कर्मा आरो धर्मा दिने-दिने बाढ़क शुरू करलेइ' के रूप में होना चाहिए।

6.1.3 उपदेशात्मक कथाएँ

* *'करबे त खाबे' (करने पर ही खाने को मिलेगा)*

किसी गाँव में रामा-रामी नाम के दंपत्ति अपनी दो पुत्रियों के साथ निवास करते थे। वे अपनी दोनों पुत्रियों के लिए योग्य वर की तलाश में थे किन्तु उनकी पुत्रियाँ विवाह हेतु इच्छुक नहीं थीं। इसीलिए वे अपने पिता के घर को त्याग देती हैं। रात्रि के प्रहर में वे दोनों बहनें विश्राम हेतु एक पेड़ के नीचे आश्रय लेती हैं। प्रातः काल नींद से जगने पर उन्हें प्यास लगती है लेकिन वहाँ दूर-दूर तक पानी की एक बूँद की आस न थी। तदुपरांत बड़ी बहन ने पेड़ की शाखा पर पड़े हुए चादर को निचोड़कर उसके पानी से अपनी प्यास बुझाई तथा छोटी बहन ने नेवले के शरीर पर एकत्रित जल की बूदों से अपनी तृष्णा शांत की। उसके बाद वे दोनों बहने उस स्थान से निकल पड़ीं। सुदूर स्थित एक गाँव में उन दोनों ने अपना घर बसाया तथा नये जीवन की शुरुआत की। कुछ दिनों के उपरांत दोनों बहनें गर्भवती हो गयीं। पेड़ की शाखा पर पड़े किसी व्यक्ति के कंबल को निचोड़कर अपनी प्यास बुझाने के कारण बड़ी बहन ने एक पुत्र को जन्म दिया तो वहीं छोटी बहन की गर्भ से एक नेवले ने जन्म लिया कारण कि छोटी बहन ने नेवले के शरीर से जल की बूंदों को ग्रहण किया था।

अक्सर बड़ी बहन अपनी छोटी बहन को नेवले के बच्चे को जन्म देने के कारण परिहास में अपमानित किया करती थी। इसी कारण कुछ दिनों के बाद वे दोनों अलग-अलग रहने लगीं। बड़ी बहन का पुत्र अत्यंत आलसी प्रवृत्ति का था तो दूसरी ओर नेवला दिन-रात अपने खेत में कठिन परिश्रम करता था। इसीलिए कुछ ही दिनों में छोटी बहन का परिवार धन-धान्य से संपन्न हो गया किन्तु बड़ी बहन को दो जून की रोटी भी ठीक तरह से नसीब नहीं होती थी। कुलमिलाकर इस लघु कथा के माध्यम से यह शिक्षा देने का प्रयास किया गया है कि केवल मानव का शरीर प्राप्त करना पर्याप्त नहीं होता अपितु बुद्धि, विवेक और निरंतर कठिन परिश्रम से

असाध्य को भी साधा जा सकता है। समाजभाषिक दृष्टि से इस लोककथा के कुछ अंश का विश्लेषण यहाँ प्रस्तुत है-

अनुशीलन 1:

"निजर-निजर संतान पालादारी कोरे दुनो दीदी-बहिन दिन पार कोरते धरलेक। दुयोझन संतान डागोर-दीघल होलेक। नेउला जन्म दियार खातिरे दीदीटाई बहिनके प्रायेई ठाट्टा-मस्करा कोरे लाज दिते रहे। दिन पार होवार लगे-लगे ओईटा लेईकोरे दुनोझनेर माझे प्रायेई काजिया-पेशाल होते धरलेक आर शेषे दुयोझन बेलेग होई कोरे संसार चलाते धरलेक।"[7]

भाव यह है कि दोनों बहनें अपनी-अपनी संतान का पालन-पोषण करते हुए अपना जीवन व्यतीत करने लगीं। कुछ समय बाद दोनों संतानें बड़ी हो गयीं। नेवले को जन्म देने के कारण बड़ी बहन प्रायः छोटी बहन का उपहास किया करती थी किंतु कुछ दिनों के बाद दोनों में इसी कारण मतभेद होने लगा तथा अंत में दोनों अलग-अलग रहने लगीं।

उपर्युक्त पंक्तियों में प्रमुख रूप से असमिया, बांग्ला, भोजपुरी आदि भाषाओं के शब्दों के प्रयोग से बहुभाषिकता के साथ-साथ कोड-मिश्रण की स्थिति को सहज ही देखा जा सकता है। इन पंक्तियों में *'निजर'* (अपना), *'डांगोर'* (बड़ा), *'दियार'* (देने का), *'काजिया-पेशाल'* (लड़ाई-झगड़ा), *'बेलेग'* (पृथक) आदि असमिया भाषा के शब्द हैं। इसके अलावा *'खातिरे'* (लिए) भोजपुरी का शब्द है तथा *'ठाट्टा'* (उपहास), *'शेषे'* (अंत में) शब्द असमिया तथा बांग्ला दोनों ही भाषाओं में लगभग सामान रूप से प्रयुक्त होते हैं। *'संतान', 'जन्म', 'लाज', 'संसार'* जैसे शब्द मूलतः संस्कृत के हैं जो हिंदी में भी मानक रूप में प्रयुक्त होते हैं। यहाँ कुछ शब्दों के निम्न कोड वाले रूप का प्रयोग हुआ है। जैसे- *'मस्करा'* (मसख़रा- अरबी शब्द), *'माझे'* (माजे अर्थात् बीच में) आदि। अतः यहाँ भाषाद्वैत की स्थिति है। साथ ही *'दीदी', 'बहिन'* जैसे संबंधसूचक शब्द रिश्ते-नाते से संबंधित प्रयुक्तियाँ हैं। *'निजर-निजर', 'लगे-लगे'* तथा *'ठाट्टा-मस्करा (मसख़रा)'* आदि में पुनरुक्तियाँ हैं। *'निजर-निजर'* तथा *'लगे-लगे'* में पूर्ण पुनरुक्ति है जो क्रमशः प्रत्येक और क्रिया-विशेषण के रूप में प्रयुक्त हुए हैं। वहीं *'ठाट्टा-मस्करा'* में आधिक्यबोधक पुनरुक्ति है। इसमें *'ठाट्टा'* असमिया तथा बांग्ला का और *'मस्करा'* अर्थात् 'मसख़रा' अरबी का शब्द है। इन दोनों शब्दों का अर्थ है उपहास करना। टॉपिकीकरण के तहत भाषा-शैली में रोचकता लाने हेतु तथा वाक्य से विभिन्न अवयवों पर बल देने के लिए कुछ पंक्तियों

की सामान्य भाषिक-व्यवस्था में फेर बदल की गयी है। यथा- *'निजर-निजर संतान पालादारी कोरे दुनो दीदी-बहिन दिन पार कोरते धरलेक'* तथा *'नेउला जन्म दियार खातिरे दीदीटाई बहिनके प्रायेई ठाट्टा-मस्करा कोरे लाज दिते रहे'* आदि। इन्हें सादरी भाषा की सामान्य वाक्य-संरचना के अनुसार क्रमशः 'दुनो दीदी-बहिन निजर-निजर संतान पालादारी कोरे दिन पार कोरते धरलेक' और 'दीदीटाई प्रायेई बहिनके नेउला जन्म दियार खातिरे ठाट्टा-मस्करा कोरे लाज दिते रहे' के रूप में होना चाहिए।

अनुशीलन 2:

"नेउलाटा सबदिनेई निजेर खेतिर पाथारे नियमित मते काम करते जाते रहे। नख आर दाँतले खोकरे उवे माटी कुढ़े चाह करते रहे। माये पाथारे जलपान दिते रहे। हाबिये थाका सब नेउलाके हाँकाई कोरे उवे जलपान खातेले दिते रहे। सोवाद लागा जलपान खातेले सब नेउलाई उवार पाथारे काम कोरे दिते रहे। जार बाबे ओदेर पाथारे प्रत्येक बछररेई फसल भरपूर होते रहे। गोटा बछरजोरा निजेर अन्नमूठा जुगाड़ करेउ ओरा बाजारे फसल सब बिक्री कोरे बहुत धन कामाते रहे। ओहे खातिर बहिनटार अवस्था कम दिनेर भितरेई जयजय-मयमय होईछिलो। इदिगे दीदीटार बेटाटा मानुष होईकरेउ समयमते पाथार काम कोरतेले जाते नाई रहे। उवे छिलो अतिपात सुस्ती, आर फिताही मारे घरे फुरा आर छिलो बुद्धिहीन आर रागिया स्वभावेर।"[8]

अर्थात् नेवला प्रतिदिन नियमित रूप से खेत में जाकर काम करता था। अपने नाखूनों और दांतों से खेतों की जुताई करने का प्रयास करता था। उसकी माता प्रतिदिन खेत में जलपान (नास्ता) लेकर जाता थी। माता द्वारा लाये गए जलपान को वह वन के सभी नेवलों के साथ मिल-बाँटकर खाता था। स्वादिष्ट जलपान खाने की लालसा में सभी नेवले मिलकर खेत में काम किया करते थे। निरंतर परिश्रम के बल पर प्रत्येक वर्ष उनका घर धन-धान्य से परिपूर्ण रहता था। यहाँ तक कि अनाजों को बेचकर माता और पुत्र धन का संचय भी करते थे। इससे उनका परिवार कम दिनों में ही आर्थिक रूप से समृद्ध हो गया। इसके विपरीत बड़ी बहन के परिवार को दो जून की रोटी भी ठीक तरह से नहीं मिलती थी। उसका पुत्र मनुष्य की काया पाकर भी स्वभाव से आलसी, जड़बुद्धि और गुस्सैल था। वह खेतों में परिश्रम न करके अपना अधिकांश समय नाहक बर्बाद कर देता था। परिश्रम का कोई विकल्प नहीं होता है। केवल शारीरिक बल से कुछ नहीं होता अपितु निरंतर परिश्रम से असंभव को भी साधा जा सकता है।

उपर्युक्त पंक्तियों में हिंदी, असमिया, बांग्ला, भोजपुरी, फारसी तथा अन्य संस्कृतनिष्ठ मानक शब्दों के प्रयोग से कोड-मिश्रण के साथ-साथ बहुभाषिकता की स्थिति उत्पन्न हुई है। उदाहरण के तौर पर यहाँ बांग्ला के *'निजेर'* (अपना), *'पाथारे'* (खेत में), *'गोटा'* (संपूर्ण), *'अन्नमूठा'* (अन्न-संपदा), *'छिलो'* (था), *'रागिया'* (गुस्सैल) आदि शब्दों का प्रयोग हुआ है। इसके साथ ही हिंदी तथा संस्कृत के मानक शब्दों जैसे- *'नियमित'*, *'काम'*, *'चाह'*, *'सब'*, *'फसल'*, *'भरपूर'*, *'जुगाड़'*, *'धन'*, *'कम'*, *'जलपान'*, *'बिक्री'*, *'अवस्था'*, *'मानुष'*, *'बुद्धिहीन'* आदि के प्रयोग से भाषा के उच्च कोड का पता चलता है। इन पंक्तियों में प्रयुक्त *'हाबि'* (जंगल), *'जार बाबे'* (जिसके कारण), *'अतिपात'* (अत्यधिक), *'फिताहि मारा'* (प्रभाव जमाना) आदि शब्द असमिया के हैं तथा *'नोख'* (नाखून), *'माटि'* (मिट्टी), *'सोवाद'* (स्वाद) आदि असमिया और बांग्ला दोनों ही भाषाओं में व्यवहार किये जाते हैं। ग़ौरतलब है कि 'माटी' भोजपुरी भाषा में भी प्रयोग किया जाता है। इसके अलावा *'ओहे खातिर'* (इसीलिए) शब्द भी भोजपुरी भाषा का है। फारसी के भी कुछ शब्द यहाँ प्रयुक्त हुए हैं, जैसे- *'बाजार'*, *'सुस्ती'*। अतः भिन्न भाषाओं के शब्दों के प्रयोग से यहाँ कोड-मिश्रण की स्थिति उत्पन्न हुई है। लोककथा के उद्धृत अंश में प्रयुक्त शब्द *'खोकरे'* के लिए 'खखोर' उच्च कोड या मानक शब्द है। अतः यहाँ भाषा के निम्न कोड के प्रयोग के कारण भाषाद्वैत की स्थिति है। साथ ही *'जयजय-मयमय'* में आंशिक पुनरुक्ति है। प्रस्तुत पंक्तियों में विभिन्न क्षेत्र की प्रयुक्तियों का भी प्रयोग हुआ है। जैसे- *'माई'*, *'बहिन'*, *'दीदी'* तथा *'बेटा'* संबंधसूचक प्रयुक्तियाँ हैं, *'नोख'* तथा *'दाँत'* शरीर संबंधी प्रयुक्तियाँ हैं और *'फसल'*, *'अन्नमूठा'*, *'पथार'*, *'माटि कूढ़ा'* ये सभी कृषि-क्षेत्र संबंधी प्रयुक्तियों में शामिल है। इसके अलावा *'सुस्ती'*, *'फिताहि मारा'*, *'बुद्धिहीन'*, *'रागिया'* आदि मनुष्य के स्वभावोचित गुणों से संबंधित प्रयुक्तियों का भी प्रयोग हुआ है। भाषा में रोचकता लाने हेतु तथा वाक्य में कुछ शब्दों पर बल देने के लिए कुछ पंक्तियों के शब्दों के नियत स्थान में परिवर्तन किया गया है। उदाहरण के लिए *'सोवाद लागा जलपान खातेले सब नेउलाई उवार पाथारे काम कोरे दिते रहे'* तथा *'उवे छिलो अतिपात सुस्ती, आर फिताही मारे घरे फुरा आर छिलो बुद्धिहीन आर रागिया स्वभावेर'* पंक्तियों को देख सकते हैं। इन्हें सादरी की सामान्य भाषिक-व्यवस्था के अनुरूप क्रमशः 'सब नेउलाई सोवाद लागा जलपान खातेले उवार पाथारे काम कोरे दिते रहे' तथा 'उवे अतिपात सुस्ती, आर फिताही मारे घरे फुरा छिलो आर बुद्धिहीन आर रागिया स्वभावेर छिलो' के रूप में होना चाहिए। भाषा की सामान्य संरचना में यह परिवर्तन टॉपिकीकरण की प्रक्रिया के अंतर्गत आता है।

* *'भानुमतीर कर्म' (भानुमती का कर्म)*

चाय जनगोष्ठी के लोक में प्रचलित यह एक उपदेश प्रधान कथा है। संपूर्ण लोककथा के केंद्र में राजा विक्रमादित्य और रानी भानुमती हैं जिनके चरित्र के माध्यम से समाज में आदर्श व्यक्तित्व के निर्माण की ओर संकेत किया गया है। इस कथा के माध्यम से यह स्थापित किया गया है कि मनुष्य अपने कर्म से किसी भी विपदा से मुक्ति पा सकता है। इस लोककथा के प्रारंभ में राजा-रानी का उल्लेख मिलता है जो स्वभावतः अत्यंत अहंकारी थे। उनकी पाँच पुत्रियाँ थीं जिनमें सबसे छोटी पुत्री भानुमती अपने माता-पिता और शेष चारों बहनों से स्वभाव में बिल्कुल अलग, धैर्यवान तथा कर्मठ थी। जबकि उसकी बाकी चारों बहनें अहंकारी और स्वार्थी प्रवृत्ति की थीं। इसीलिए भानुमती को उसके परिवार में हेय दृष्टि से देखा जाता था। राजा-रानी ने भी अपनी चारों पुत्रियों का विवाह राजाओं व राजकुमारों से किया और भानुमती का विवाह एक भिक्षुक के साथ करवा दिया। विवाहोपरांत भानुमती अपने पति के साथ राजमहल से प्रस्थान करती है। रात्रि के प्रहर में विश्राम हेतु वे दोनों रास्ते के किनारे के एक बड़े वृक्ष के नीचे ठहरते हैं। विश्राम के दौरान भानुमती को अचानक दो साँपों के बातचीत का आभास होता है। वृक्ष की शाखा पर रहने वाला साँप भानुमती के पति के नाक से निकले हुए शनि रूपी साँप से दानी, महात्मा तथा पराक्रमी राजा विक्रमादित्य के शरीर से निकल जाने के लिए कहता है ताकि विक्रमादित्य राजा पुनः स्वस्थ होकर अपने राजकाज की जिम्मेदारियों को निभा सकें। दोनों पक्ष की बातें इधर भानुमती के संज्ञान में थीं। इसी बातचीत के क्रम में भानुमती को यह ज्ञान हुआ कि मिर्च मिले हुए दो बाटी जल को यदि राजा को पिला दिया जाए तो उन्हें शनि रूपी साँप से मुक्ति मिलेगी। भानुमती ने अविलम्ब इस उपाय द्वारा अपने भिक्षुक पति के सभी कष्टों का निवारण किया। शनि रूपी सर्प से मुक्ति मिलते ही भिक्षुक पुनः राजा विक्रमादित्य बन गया। तत्पश्चात् राजा विक्रमादित्य और रानी भानुमती सकुशल अपने राज्य को लौट गये तथा प्रजाहित में कार्य करने लगे। इस कहानी में मनुष्य के जीवन में ग्रह-गोचर के प्रभावों को दर्शाया है। कालांतर से यह लोक विश्वास प्रचलित है कि शनि की कुदृष्टि राजा को भी रंक बना देती है। इस बात को कथा में भली-भाँति फलित होते हुए दर्शाया गया है। परंतु जीवन की विषम से विषम परिस्थितियों में भी जो व्यक्ति धैर्यपूर्वक तथा सचेष्ट होकर समस्याओं के समाधान पर अपना ध्यान केंद्रित करता है वास्तव में उसे ही खुशहाल जीवन की प्राप्ति होती है। इस लोककथा के कुछ संवादों का समाजभाषिक विश्लेषण यहाँ प्रस्तुत है-

अनुशीलन 1:

"राजा-राणी आपन सब बेटीके पूछलस, 'के कि रकम जीवन बिताबा।' बड़ चाईरो बेटी बोल, 'हामरा माई-बापेर कर्म से जीवन बिताबो।' किंतु छोट राजकुमारी भानुमती गहिन सुरमें बोलल 'हामि निजर कर्म से जीवन बिताबो।' ...राजा-राणी, 'जा बेटी, तुई निजर कर्म से जीवन बिता।'"[9]

उद्धृत पंक्तियों का भावार्थ यह है कि राजा-रानी ने सभी राजकुमारियों से यह पूछा कि 'कौन किस प्रकार अपना जीवन निर्वाह करेगा?' ज्येष्ठ चारों राजकुमारियों ने प्रत्युत्तर में कहा कि 'हम माता-पिता के कर्म से जीवन निर्वाह करेंगे।' किंतु सबसे छोटी राजकुमारी भानुमती ने गंभीर स्वर में यह उत्तर दिया कि 'मैं अपने कर्म से जीवन यापन करुँगी।' इसीलिए राजा-रानी भानुमती से विवाहोपरांत यह कहकर भिक्षुक के साथ विदा करते हैं कि 'जाओ पुत्री। तुम अपने कर्म से अपना जीवन बिताओ।'

उपर्युक्त संवाद में वक्ता और श्रोता दोनों सामान रूप से सक्रिय हैं। अतः यहाँ प्रोक्ति के स्तर पर गत्यात्मक संलाप है। *'जीवन', 'कर्म'* जैसे शब्द उच्च कोड अर्थात् संस्कृतनिष्ठ शब्द हैं किन्तु *'राणी'* शब्द का निम्न रूप प्रयुक्त हुआ है इसके लिए 'रानी' शब्द उपयुक्त है। भाषा के उच्च एवं निम्न कोड का प्रयोग भाषाद्वैत की स्थिति को दर्शाता है। *'निजर'* (अपना), *'गहिन'* (गंभीर) शब्द असमिया भाषा का है। ये सभी भिन्न भाषाई शब्द कोड-मिश्रण की स्थिति के सूचक हैं। *'बिताबा'* शब्द हिंदी की क्रिया 'बिताना' का सादरी रूप है। *'माई-बाप'* (माता-पिता), *'बेटी'* आदि रिश्ते-नाते की संबंधसूचक प्रयुक्तियाँ हैं।

अनुशीलन 2:

"'ओई मुर्ख शनिदेव। ओतो धार्मिक, दानी, माहान राजा विक्रमादित्य के पेटे ढुके केने शास्ति दिछि। निकले जा।'

'हामिउ जानि राजा विक्रमादित्य बहुत दानी बोले। एक दिन हामि उवार पेटे ढुकबो बोलार लगे-लगे हामाके पेटे भोराई लिलो। मुर्ख राजा। शनि देव जाहाँई थाके ध्वंस कोरे बोले नाई जाने नेकि।'

'राणी भानुमतीये गोम पाई जोदि राजाक दुई बाटी झलकीया पानी खावाई देई। तबे तोर कि हालत होबेक चिंता कोर।'

'ओईरकम नाई होबेक। राणी केखनौ गोम नाई पाबेक। राजा नाई मरासे हामि एई जाघा नाई छाड़बो।'"[10]

उद्धृत पंक्तियों में लोककथा के पात्र के रूप में आये दोनों सर्पों के संवाद का उल्लेख किया गया है। इन पंक्तियों का भाव क्रमशः कुछ इस प्रकार है- 'हे मूर्ख शनिदेव। इतने धार्मिक, दानी, महान राजा विक्रमादित्य के पेट में घुसकर उन्हें क्यों कष्ट दे रहे रहे हो। निकल जाओ।' 'मुझे भी ज्ञात है कि राजा विक्रमादित्य बहुत दानी है। एक दिन मैंने उसके पेट में घुसने का आग्रह किया तो उसने तुरंत मुझे अपने पेट में रहने के लिए स्थान दे दिया। मूर्ख राजा। उसे नहीं पता कि शनिदेव जहाँ वास करते हैं वहाँ केवल विध्वंश करते हैं।' 'यदि रानी भानुमती राजा को मिर्च मिश्रित दो बाटी जल पिला दे तो तुम्हारी क्या हालत होगी सोचो।' 'ऐसा कुछ नहीं होगा। रानी कभी नहीं जान पाएगी। राजा के मृत्यु से पूर्व मैं इस स्थान से अन्यत्र कहीं नहीं जाऊँगा।' कुलमिलाकर इन पंक्तियों में शनि के दुष्प्रभावों को दर्शाया गया है।

समाजभाषिक अध्ययन की दृष्टि से देखें तो उपर्युक्त संवाद के अंश में दो सर्प वक्ता और श्रोता के रूप में परस्पर अपनी भूमिकाएँ बदल रहे हैं। अतः यहाँ गत्यात्मक संलाप की स्थिति देखी जा सकती है। इन पंक्तियों में *'मूर्ख', 'ध्वंस'* आदि संस्कृतनिष्ठ मानक शब्द हैं। इसके अलावा *'ढुके', 'जानि', 'खावाई', 'जाघा', 'छाड़बो'* आदि सभी शब्द बांग्ला के हैं। इन शब्दों का अर्थ क्रमशः 'घुसना', 'जानना', 'खिलाना', 'स्थान' और 'छोडूंगा/ छोडूंगी' है। *'हालत', 'चिंता'* आदि शब्द ज्यादातर हिंदी में प्रयुक्त होने वाले मानक शब्द हैं। इन पंक्तियों में असमिया के भी कुछ शब्दों का प्रयोग हुआ है यथा- *'गोम पाई'* (संज्ञान होना), *'झलकीया'* (मिर्ची), *'नेकि'* (प्रश्नसूचक शब्द) आदि। *'शास्ति'* शब्द 'कष्ट' के अर्थ संदर्भ में असमिया और बांग्ला दोनों ही भाषाओं में व्यवहार किया जाता है। इस तरह हम यहाँ कोड-मिश्रण की स्थिति देख सकते हैं क्योंकि सादरी भाषा के इन वाक्यों में संस्कृत, बांग्ला, असमिया आदि भाषाओं के शब्दों का प्रयोग हुआ है। *'माहान'* तथा *'दिछि'* इन दोनों ही शब्दों का निम्न कोड के रूप में प्रयोग हुआ है। *'माहान'* के लिए 'महान' मानक शब्द है तथा *'दिछि'* (देना) बांग्ला क्रिया है। साधु भाषा में इसके लिए 'दिच्छि' शब्द का प्रयोग किया जाता है। भाषा के निम्न कोड का प्रयोग होने के कारण यहाँ भाषाद्वैत की स्थिति है। *'लगे-लगे'* (तुरंत) में पूर्ण पुनरुक्ति देख सकते हैं जो क्रिया विशेषण के रूप में यहाँ प्रयुक्त हुआ है। इसके अतिरिक्त इस संवाद में अलग-अलग प्रयुक्तियों का भी प्रयोग हुआ है। यथा- *'धार्मिक', 'दानी', 'माहान'* (महान) आदि आदर्शसूचक और *'झलकीया', 'पानी'* खाद्य-सामग्री संबंधी प्रयुक्तियाँ हैं।

* *'हाथी आर पारकि' (हाथी और पंडुक)*

चाय जनगोष्ठी में प्रचलित इस पंचतंत्र की कहानी में पशु-पक्षियों के माध्यम से यह संदेश देने का प्रयास किया गया है कि कठिन परिस्थिति में भी एकजुट होकर बड़ी से बड़ी चुनौती अथवा समस्या का समाधान किया जा सकता है। इस लोककथा के शीर्षक से यह सहज ही ज्ञात हो जाता है कि इस कथा के केंद्र में हाथी और पंडुक चिड़ियाँ का संघर्ष है। कथा के प्रारंभ में किसी अरण्य में नर और मादा पंडुक अपना घोंसला बनाकर एक साथ खुशहाल जीवन व्यतीत करते थे। एक दिन अचानक एक धूर्त हाथी ने उस अरण्य में अपने बल का दुष्प्रदर्शन किया। पेड़-पौधों को तोड़-मरोड़कर पूरे जंगल को तहस-नहस कर दिया। इस विध्वंस में पंडुकी का घोंसला भी पूरी तरह उजड़ गया और उसके सभी अंडे नष्ट हो गये। इसके बाद पंडुक और पंडुकी ने कठफोड़वा, मच्छर और मेंढक की सहायता से धैर्य, बुद्धि और साहस के साथ हाथी जैसे विशालकाय और बलशाली जीव को मृत्यु के घाट उतार दिया। उसके बाद जंगल के सभी प्राणी सौहार्द से रहने लगे। कुलमिलाकर, इस लोककथा में हाथी के विशालकाय शरीर को प्रतीकात्मक ढंग से एक बड़ी समस्या के रूप में में दर्शाया गया है जिसके सामने पंडुक, कठफोड़वा, मच्छर, मेंढक जैसे जीव आकार में बहुत तुच्छ से प्रतीत होते हैं। किंतु यहाँ बल के बनिस्पत बुद्धि और साहस को अधिक महत्ता दी गयी है। हाथी के मुकाबले मच्छर, पंडुक जैसे जीव शारीरिक तौर पर बलशाली न होते हुए भी एकत्रित होकर हाथी को मृत्युमुखी कर देते हैं। अतः हम देखते हैं कि चाय श्रमिक भी विविध भाषाई और सांस्कृतिक पृष्ठभूमि के होने के बावजूद एकत्रित होकर असम में निवास कर रहे हैं और अपने साथ हो रहे शोषण के खिलाफ मुखर विरोध कर रहे हैं। अपने अधिकारों के लिए संगठित होकर आवाज बुलंद कर रहे हैं। पंचतंत्र की इस कथा के कुछ अंश दृष्टव्य हैं-

अनुशीलन 1:

"'सच्चे, हामर बड़ी राग उठल। हाथीके पारले हामे मराई देल्लि।' एकदिन फजीर समय पारकिके बहु आपन बंधु काठ-ठठ्कि चिड़ई के बोलल, 'देख भाईह्ल उटा एकटा असंभव बात लाग।' काठ-ठठ्कि बोलल। 'हाथी तोरसे कातना डांगोर ह? कि बोलेंहे? 'हाँ। मगर तोई सहाय कोरबे त ईटा संभव होई जात।' पारकि बोलल। 'नाई। हामनि दुझने एतना डांगोर काम करे नाई पारबो।' काठ-ठठ्कि ओकर संगे एकमत नाई होल। 'पाछे हामर मिता मच्छर संगे बतियाबो। हामनिके साहाय करब पारे।'"[11]

अर्थात् अपने सभी अंडों को नष्ट होता देखने के बाद एक दिन प्रातः मादा पंडुक अपनी सखी कठफोड़वा से कहती है कि 'सचमुच मैं अत्यंत क्रोधित हुई। संभव होता तो मैं हाथी का वध कर देती।' कठफोड़वा प्रत्युत्तर में कहती है 'देखो ऐसा करना असंभव है। हाथी तुमसे आकार में कितना विशाल है। क्या कहती हो?' पंडुकी पुनः कहती है 'हाँ! किंतु तुम्हारी सहायता से इस कार्य को अंजाम दिया जा सकता है।' लेकिन कठफोड़वा पंडुकी से सहमत नहीं होती और वह यह सुझाव देती है कि 'केवल हम दोनों इस काम को करने में असमर्थ होंगे। इसीलिए मैं अपने मित्र मच्छर से इस विषय में सहायता हेतु बातचीत करुँगी।'

मादा पंडुक और कठफोड़वा के बीच के संवाद की इन पंक्तियों में भिन्न भाषाई शब्दों का प्रयोग हुआ है जिससे कोड-मिश्रण के साथ ही बहुभाषिकता की स्थिति भी दिखायी देती है। जैसे- *'सच्चे', 'बड़ी', 'एक दिन', 'बात', 'मगर', 'संभव', 'मच्छर'* आदि सभी हिंदी भाषा में प्रयुक्त होने वाले मानक शब्द हैं। इसके अतिरिक्त *'राज'* (क्रोध), *'पारले'* (कर पाना), *'संगे'* (साथ में) ये सभी शब्द बांग्ला भाषा में प्रयोग किये जाते हैं। इस संवाद में *'डांगर'* (बड़ा) असमिया भाषा में प्रयुक्त होने वाला शब्द है। *'सहाय'* (सहायता) असमिया तथा बांग्ला दोनों ही भाषाओं में प्रयोग किया जाने वाला शब्द है। यहाँ भोजपुरी के भी कुछ शब्दों का प्रयोग देखा जा सकता है जैसे- *'उठल'* (उठा), *'फजीर'* (प्रातः), *'आपन'* (अपना), *'चिड़ई'* (चिड़िया), *'एतना'* (इतना), *'ओकर'* (उसका) आदि। *'कातना'* तथा *'साहाय'* ये दोनों शब्द क्रमशः हिंदी के 'कितना' और असमिया के 'सहाय' शब्द के निम्न कोड रूप हैं। अतः यहाँ भाषाद्वैत की स्थिति स्पष्ट रूप में देखी जा सकती है। भोजपुरी के शब्द 'बतियाइब' (बतियाना/ बात करना) का सादरी भाषा में रूप परिवर्तित होकर *'बतियाबो'* हो गया है। *'हाथी', 'काठ- ठठ्कि'* (कठफोड़वा), *'चिड़ई'* (चिड़िया), *'मच्छर'* आदि को जंतु विज्ञान संबंधी प्रयुक्तियों के अंतर्गत रखा जा सकता है।

अनुशीलन 2:

"बेंगके बात उसब बड़ी ध्यान से शुनल। ताकर पाछे बेंग के बोला रकम काम कोरेले उसब चईल गेल। पारकि उईड़ के आगवाई गेल आर हाथीके माथा ऊपर फरफराई के उड़े लागल, झपटा-झपटी करे लागल आर बहुत जोर जोर से चेंचाई लागल। हाथीके बहुत राग उठल आरु ओकरा कुदाई लागल। ओहे समय मच्छर आई पहँचल। उ हाथीके काणमें गुणगुणाई लागल। हाथी ओकराइके आपन आँइख मुइद देल। सेहे समय काठ-

ठठ्कि हाथीके दुनो आँइख ठठइक के निकाईल देल। आभि आंधा होईके आर आँइखके दुख आर जलन से पीड़ित होईके हाथी पानीके खोजमें पोखड़ा ढूंड़े लागल।"[12]

प्रस्तुत पंक्तियों में सभी मेंढक द्वारा दिये गये सुझाव को सुनकर उसके क्रियान्वयन में जुट गए। मादा पंडुक उड़कर हाथी के सिर के ऊपर फड़फड़ाने लगी। इससे हाथी क्रोधावेश में आकर पंडुकी को खदेड़ने लगा। उसी समय मच्छर हाथी के कान में गुनगुनाने लगा और कठफोड़वे ने अपनी चोंच से हाथी की दोनों आँखों को फोड़ दिया। हाथी अँधा होकर आँखों की जलन और पीड़ा से निजात पाने के लिए पोखर अथवा तालाब की तलाश में इधर-उधर भागने लगा।

उपर्युक्त पंक्तियों में *'बेंगके'* (मेंढक के), *'बोला रकम'* (कहे अनुसार), *'राग'* (क्रोध) आदि शब्द बांग्ला में प्रयुक्त होने वाले शब्द हैं। इसके अलावा हिंदी के कुछ मानक शब्दों जैसे- *'बात', 'बड़ी', 'ऊपर', 'मच्छर', 'जलन', 'खोज'* आदि का प्रयोग हुआ है। *'ध्यान', 'बहुत', 'पीड़ित'* जैसे संस्कृतनिष्ठ शब्दों के प्रयोग से लोक भाषा और भी विशिष्ट बनी है। इसके साथ ही भोजपुरी के *'गेल'* (गया), *'ओकरा'* (उसे), *'आपन'* (अपना), *'लागल'* (लगा) और असमिया भाषा के *'आगवाई'* (आगे जाना), *आरु* (और) इत्यादि शब्दों का इस कथांश में प्रयोग हुआ है। सादरी भाषा की इन पंक्तियों में विभिन्न भाषाओं के शब्दों के प्रयोग के कारण यहाँ कोड-मिश्रण तथा बहुभाषिकता की स्थिति उत्पन्न हुई है। उद्धृत अंश में कुछ शब्दों के निम्न कोड रूप का प्रयोग हुआ है। उदाहरण के तौर पर- *'चईल', 'उईड़', 'फरफराई', 'कुदाई', 'पहँचल', 'आँईख', 'निकाईल', 'आभि', 'आंधा', 'ढूँड़े'* आदि। अतः यहाँ भाषाद्वैत की स्थिति भी मौजूद है। इनका मानक रूप क्रमशः 'चल', 'उड़', 'फड़फड़ाई', 'कुदावे' (भोजपुरी शब्द है, अर्थ- दौड़ाना), 'पहुँचल' (भोजपुरी शब्द, अर्थ- पहुँच गया), 'आँख', 'निकाल', 'अभी', 'अंधा' तथा 'ढूंढे' होगा। यहाँ मेंढक और अन्य जीवों के बीच के संवाद में द्वयाभिमुख स्थिर संलाप की स्थिति है। 'जोर' शब्द की दो बार आवृति अर्थात् *'जोर-जोर'* में पूर्ण पुनरुक्ति है जो क्रिया विशेषण के रूप में प्रयुक्त हुआ है। इसके अलावा *'बेंग'* (मेंढक), *'हाथी', 'पारकि'* (पंडुक), *'मच्छर', 'काठ-ठठ्कि'* (कठफोड़वा) ये सभी जंतु विज्ञान विषयक तथा *'माथा'* (सिर), *'कान', 'आँईख'* (आँख) शरीर के रचना विज्ञान संबंधी प्रयुक्तियाँ हैं।

* *'गलत् उपदेश' (गलत उपदेश)*

यह लघु कथा पशु-पक्षियों पर आधारित है। इस कथा में वन परिवेश का उल्लेख मिलता है जिसमें एक जोड़ी बगुला आनंदपूर्वक निवास करते थे। नर और मादा बगुला जिस पेड़ पर अपना घोंसला बनाकर रहते थे उसके ठीक नीचे एक विशालकाय जहरीला सर्प रहा करता था। वह सर्प निरंतर बगुला के अण्डों तथा नन्हें बच्चों को खाकर अपनी क्षुधा को शांत करता था। एक दिन उस सर्प ने बगुला के सभी बच्चों को खा लिया। उसके बाद उस दंपति बगुले की पीड़ा की कोई सीमा नहीं रही। वे दोनों किसी तालाब के किनारे हताश होकर बैठे हुए थे तभी एक केकड़े ने उनकी समस्या को गंभीरतापूर्वक सुना और मित्रवत् सहानुभूति प्रकट की। समस्या के समाधान के तौर पर उसने नेवले और सर्प की शत्रुता का हवाला देते हुए कहा कि नेवले की मदद से ही उनको इस समस्या से निजात मिल सकती है। दंपति बगुले ने केकड़े के सुझाव का यथावत् पालन करते हुए साँप के बिल से लेकर नेवले के बिल तक मछली को फेंक दिया। केकड़े के कहे अनुसार नेवला मछली को खाता हुआ साँप के बिल तक पहुँच गया। उसके बाद सांप और नेवले के बीच की लड़ाई में सर्प को अपनी जान से हाथ धोना पड़ा। परंतु नेवला उस स्थान पर बस गया और फिर धीरे-धीरे वह बगुले के बच्चों का शिकार करने लगा तथा उनकी जान को भी खतरा हो गया। इस तरह बगुलों की समस्या के निदान के बजाए उनकी समस्या और बढ़ गयी। यह लघुकथा चाय जनगोष्ठी में बच्चों के लिए प्रचलित पंचतंत्र की शिक्षाप्रद कहानी है। इसका मूल ध्येय बच्चों को यह शिक्षा देना है कि गंभीर समस्या की स्थिति में किसी भी सुझाव को ग्रहण करने से पूर्व बुद्धि और विवेक से काम लेना चाहिए। अन्यथा समस्या और बढ़ जाती है।

अनुशीलन 1:

"अहह्ल कि बोलबो मिता, हामर दुखके बात।' बकलिये दुनो आँईख से झरझराईके लोर निकले लागल। 'जे गाछमें खंसा बाँइधके हामनि पोवालि जागाली ओहे गाछके नीचे एकटा साँप बिल बानाईके रहे लागले होय। उ भीषण दुष्ट लागे। उ माझे-माझे गाछे उइठ के बकला छानागुला खाई जा होय। आईझ हामर सभे छानागुला ओहे मुहजरा साँपटा खाई देलो।' कनरोकोम एतने टा बात बोईलके उ फेईड़ कांदे लागल।' साँप से बाँचेले हामनि कि जे उपाई करबो कोनो चिंता कोईरके नाई पाहि। बकलीटा खाखड़ाके बोलल।"[13]

उद्धृत पंक्तियों में मादा बगुला अपनी व्यथा को केकड़े के सामने व्यक्त करती है। वह रोते हुए कहती है कि जिस वृक्ष पर उनका घोंसला बना था उसके नीचे एक दुष्ट सर्प अपना बिल बनाकर रहने लगा। वह सर्प

बीच-बीच में हमारे बच्चों को खा जाता है। आज उसने फिर हमारे सभी बच्चों को खाकर अपनी क्षुधा शांत की। इस सर्प से हमें कैसे मुक्ति मिले इसका कोई समाधान ही नहीं सूझ रहा है।

मादा बगुला और केकड़े के बीच हो रहे उपर्युक्त संवाद में प्रोक्ति के स्तर पर द्वयाभिमुख स्थिर संलाप की स्थिति है। इसमें हम बांग्ला, हिंदी, भोजपुरी आदि भाषाओं के शब्दों का प्रयोग सहज देख सकते हैं। जैसे- *'बोलबो'* (बोलूँ), *'गाछे'* (पेड़ पर), *'कांदे'* (क्रंदन) आदि बांग्ला भाषा के शब्द हैं। ध्यातव्य है कि *'कांदे'* शब्द असमिया भाषा में भी 'क्रंदन' के अर्थ में प्रयुक्त होता है। इसके अलावा *'पोवाली'* असमिया शब्द है जिसका अर्थ 'बच्चा' है। *'बात', 'नीचे', 'चिंता'* जैसे हिंदी के मानक शब्दों का प्रयोग हुआ है तथा कुछ संस्कृत के शब्दों जैसे *'भीषण', 'दुष्ट'* का भी व्यवहार हुआ है। साथ ही भोजपुरी के शब्द भी अधिक मात्रा में प्रयुक्त हुए हैं। यथा- *'लोर'* (आँसू), *'निकले लागल'* (निकलने लगा), *'गाछमें'* (पेड़ पर), *'रहे'* (था), *'मुहजरा'* (व्यंग्यार्थ- दुष्ट) आदि। अतः यहाँ कोड-मिश्रण तथा बहुभाषिकता की स्थिति है। संवाद में यथास्थान कुछ शब्दों के निम्न कोड रूप का प्रयोग हुआ है जिससे भाषाद्वैत की स्थिति दिखायी देती है। उदाहरण के तौर पर *'आँईख'* (आँख), *'बाँइधके'* (बाँधकर), *'बानाईके'* (बनाकर), *'उइठ'* (उठ), *'आईझ'* (आज), *'बोईलके'* (बोलकर), *'फेईड़', 'उपाई'* तथा *'कोईरके'* आदि शब्दों को देख सकते हैं। इन शब्दों का मानक रूप क्रमशः 'आँख', 'बाँधकर', 'बनाकर', 'उठ', 'आज', 'बोलकर', 'फिर', 'उपाय' तथा 'करके' होना चाहिए। *'माझे-माझे'* में एक ही शब्द की पुनरावृति हुई है। अतः यहाँ पूर्ण पुनरुक्ति है। *'बकला'* (बगुला), *'बकलि'* (मादा बगुला), *'साँप', 'खाखड़ा'* (केकड़ा) ये सभी अलग-अलग जीव हैं। इन्हें जंतु विज्ञान संबंधी प्रयुक्ति कह सकते हैं। इसके अतिरिक्त *'आईझ हामर सभे छानागुला ओहे मुहजरा साँपटा खाई देलो'* पंक्ति में टॉपिकीकरण है। इसे सामान्य भाषिक संरचना के नियमानुसार 'आईझ ओहे मुहजरा साँपटा हामर सभे छानागुला खाई देलो' के रूप में होना चाहिए।

अनुशीलन 2:

" 'तबे तोहनि एकटा काम कोरा।' खाँखड़ा उपदेश देवे लागल। 'तोहनि पाईहोल एकटा नेउल के डेरा से साँप के बिल तक मछरी फेंइक के देबे होतो। माछरी के गमक लोई के नेउल साँपके गाँता तक आई जात। तोहनि जानबे कराहा जे नेउल आर साँप दुनः दुनोके महाशत्रु लागय। नेउल जरूर साँपके धइर के खाई जात आर संगे-संगे तोहनिके शत्रु सबदिन के माने खतम होई जात।' "[14]

इस अंश का भावार्थ कुछ इस प्रकार है कि 'फिर तुमलोग एक काम करो।' केकड़े ने उपदेशात्मक स्वर में कहा कि 'तुमलोग सर्वप्रथम किसी नेवले के डेरे से लेकर सर्प के बिल तक मछली फेंक दो। मछली की सुगंध से नेवला सर्प के बिल तक पहुँच जाएगा। तुमलोग तो सर्प और नेवले की शत्रुता से परिचित ही हो। नेवला अवश्य ही सर्प को मारकर खा जाएगा और इससे तुम्हारा शत्रु हमेशा के लिए समाप्त हो जाएगा।

उद्धृत पंक्तियों में *'उपदेश', 'महाशत्रु'* जैसे शब्द संस्कृत के हैं। इसके अलावा हिंदी के कुछ मानक शब्दों जैसे *'तक', 'सब', 'दिन'* आदि का भी प्रयोग हुआ है। *'जरूर'* अरबी शब्द है तथा *'गाँता'* (गड्ढा), *'नेउल'* (नेवला) बांग्ला भाषा में प्रयुक्त होने वाले शब्द हैं। इसके अतिरिक्त यहाँ भोजपुरी के कुछ शब्द, यथा- *'देवे लागल'* (देने लगा), *'डेरा'* (घर), *'गमक'* (सुगंध) आदि प्रयोग किये गये हैं। अतः सादरी के इन वाक्यों में अरबी, असमिया, बांग्ला, हिंदी, भोजपुरी आदि भाषाओं के शब्दों के प्रयोग के कारण यहाँ कोड-मिश्रण की स्थिति है। साथ ही इस भाषिक प्रवृत्ति से चाय जनगोष्ठी समाज के बहुभाषी होने का भी संकेत मिलता है। यहाँ *'मछरी', 'फेंइक'* तथा *'धइर'* निम्न कोड रूप हैं। इसके लिए मानक भाषा में क्रमशः 'मछली', 'फेंक' तथा 'धर' (पकड़) शब्द प्रचलित हैं। अतः यहाँ भाषाद्वैत की स्थिति है। *'खाखड़ा'* (केकड़ा), *'नेउल'* (नेवला), *'साँप', 'मछरी'* आदि विविध प्रकार के जंतु विज्ञान विषयक प्रयुक्तियों के अंतर्गत आते हैं। *'संगे-संगे'* में पूर्ण पुनरुक्ति है। प्रोक्ति के स्तर पर इस संवाद अंश में केकड़े द्वारा दिये गये उपदेश को द्वयाभिमुख स्थिर संलाप कह सकते हैं।

6.1.4 सामाजिक कथाएँ

* *'ताँति आर परी' (ताँती और परी)*

चाय जनगोष्ठी में प्रचलित यह लोककथा यद्यपि एक परीकथा है किन्तु इसमें चाय श्रमिक समाज में व्याप्त सामाजिक स्तरीकरण के साथ ही वर्ग संघर्ष और पारिवारिक संबंधों का भी उल्लेख मिलता है। इस कथा के केंद्र में धीमा नाम का पात्र रहता है जो ताँती अर्थात् बुनकर समाज का प्रतिनिधित्व करता है। निम्न वर्ग किसी तरह से अपनी दिनचर्या में संघर्षरत रहता है तथा उनकी मनोदशा कैसी होती है इन्हीं संदर्भों को केंद्र में रखकर कहानी की पृष्ठभूमि तैयार की गयी है। कहानी की कथावस्तु के प्रारंभ में धीमा कपड़े की बुनाई कर रहा है और उस दौरान चरखा टूट जाता है। उसे ठीक करने के लिए वह जंगल में उपयुक्त लकड़ी की तलाश में निकल पड़ता है। जैसे ही वह पेड़ को काटने के लिए कुल्हाड़ी उठाता है उस समय पेड़ पर बैठी परी धीमा से

पेड़ को न काटने का आग्रह करती है तथा बदले में इच्छित वर के माँग का अवसर देती है। उस दौरान धीमा संशय में पड़ जाता है कि क्या वर माँगा जाए। इसीलिए वह परी से एक दिन का समय माँगकर अपने गाँव की ओर लौट जाता है। गाँव लौटते हुए धीमा को उसका मित्र हजाम (ठाकुर) मिल जाता है। जंगल का संपूर्ण वृतांत सुनने के पश्चात् ठाकुर धीमा को उपदेश देता है कि वह परी से एक राज्य और धन-संपत्ति माँग ले। धीमा घर जाकर अपनी पत्नी से इस विषय में चर्चा करता है और ठाकुर के सुझाव के बारे में भी उसे बताता है। धीमा की पत्नी का यह मानना था कि राजा होना, प्रजा के दुःख-कष्ट का निवारण करना आदि दुष्कर कार्य है। राजा बनने के पश्चात् उसके जीवन में प्रजा के प्रति उत्तरदायित्व इतना बढ़ जाएगा कि भोग-विलास का भी समय नहीं बचेगा। अतः वह परी से दो सिर तथा चार हाथ माँग ले। उसके बाद कपड़े की बुनाई वह और अधिक शीघ्रता से कर पाएगा। ठाकुर के बार-बार समझाने के बावजूद धीमा ने अपनी पत्नी के सुझाव के अनुरूप परी से वर की माँग की। इच्छा पूर्ति के बाद धीमा सहर्ष अपने गाँव को लौट रहा था कि उसके इस असामान्य रूप को देखकर गाँव में भय का माहौल छा गया। गाँव वालों ने धीमा को शैतान समझकर उसकी मार-मारकर हत्या कर दी। अंत समय में धीमा को इस बात का भान हुआ कि यदि उसने अपनी पत्नी की बात न मानकर मित्र की बात मान ली होती तो उसकी ऐसी हालत न होती। कुलमिलाकर इस लोककथा के मूल में यह संदेश निहित है कि किसी भी उपदेश को मानने अथवा किसी बड़े निर्णय के पूर्व विवेक से काम लेना चाहिए। मनुष्य द्वारा लिया गया एक गलत निर्णय उसके संपूर्ण जीवन को तहस-नहस कर सकता है। इसके अलावा इस कथा में आर्थिक तंगी से जूझ रहे ठाकुर, धीमा जैसे पत्रों के माध्यम से चाय जनगोष्ठी के लोक की मनोदशा तथा समाज को चित्रित करने का प्रयास किया गया है। इस लोककथा के कुछ अंशों का समाजभाषिक दृष्टि से विश्लेषण इस प्रकार है-

अनुशीलन 1:

" 'हा, कोनो बात नाई लागे।' मुसुक-मुसुक हाँइस के परी बोलल। आर धीमा घर बाटे जाए लागल। कि जे खजत एहेटा भाबते-भाबते जाते-जाते धीमा ओकर मिता नापित ठाकुर के पाई गेल। धीमा ओकरा सब बात बातालो आर परीके बरके विषये जानालो। 'कि बर खोजबे तोई भाबे नाई पारेहे।' ठाकुर जोरसे हाल्ला कईरके ओकरा पूछल। उ बोलल 'आरे दोस्त धन छोईड़के आर कि खोजबे? एगो राज्य खोज आर धन-संपत्ति खोज। राजा हवेके बर माँग। ताकर पाछे हामके तोर महा मंत्री बनाई लेबे। बुझले।' "[15]

उपर्युक्त संवाद-अंश उस समय से संबंधित है जब धीमा को परी मनचाहा वर माँगने के लिए कहती है। धीमा उस समय संशय में पड़ जाता है और सोचने-विचारने के लिए कुछ समय माँगता है। तब परी मुस्कुराते हुए कहती है 'हाँ, कोई बात नहीं है।' और फिर धीमा अपने घर की ओर लौट आता है। रास्ते में वह यही सोचता है कि उसे क्या वर माँगना चाहिए तभी उसकी मुलाकात ठाकुर से होती है। धीमा उसे समूची घटना का वृतांत सुनाता है। ठाकुर तीव्र स्वर में पूछता है कि 'तुम्हें यह नहीं समझ आ रहा है कि क्या वर माँगना है।' वह पुनः कहता है कि 'अरे दोस्त धन छोड़कर और क्या माँग सकते हो? एक राज्य और धन-संपत्ति की याचना करो। राजा बनने का वर माँगो। उसके बाद मुझे अपना महामंत्री बना लेना। समझे।'

उक्त संवाद में प्रोक्ति के स्तर पर गत्यात्मक संलाप की स्थिति हम देख सकते हैं। इस संवाद में हिंदी के कुछ शब्दों का प्रयोग हुआ है। जैसे- *'बात', 'जाते-जाते', 'सब', 'जोर से', 'राज्य', 'माँग'* आदि। इसके अलावा बांग्ला और भोजपुरी के शब्दों का भी व्यवहार देखा जा सकता है। यथा- *'भाबते'* (सोचते), *'आरो'* (और) ये दोनों ही बांग्ला भाषा में प्रयुक्त होने वाले शब्द हैं तथा *'ओकर'* (उसका), *'ओकरा'* (उसे), *'एगो'* (एक) तथा *'बुझले'* (समझे) आदि शब्द मूल रूप से भोजपुरी के हैं। अतः यहाँ कोड-मिश्रण और बहुभाषिकता की स्थिति है। यहाँ प्रयुक्त *'दोस्त'* मूलतः पारसी शब्द है किन्तु यह शब्द इस तरह भारतीय भाषाओं में घुल-मिल गया है कि इसके मूल भाषा का भान नहीं होता है। अतः इसे कोड-बॉरोइंग की स्थिति के अंतर्गत रखा जा सकता है। *'शैतान आलो'* (शैतान आया) यह पंक्ति बांग्ला भाषा की है जो कोड-अंतरण की स्थिति को दर्शाती है क्योंकि बांग्ला भाषा का यह पूरा वाक्य सादरी के वाक्यों के साथ प्रयुक्त हुआ है। इस संवाद में कुछ शब्दों के निम्न कोड रूप का प्रयोग भी देखा जा सकता है। जैसे- *'कोनो', 'आरे', 'हाल्ला', 'छोईड़के'* आदि। इनका उच्च कोड रूप क्रमशः 'कौनो/ कउनो' (भोजपुरी), 'अरे', 'हल्ला' तथा 'छोड़के' होगा। अतः यहाँ भाषाद्वैत की स्थिति है। *'राजा'* तथा *'महामंत्री'* को राजतंत्र विषयक प्रयुक्तियों में शामिल किया जा सकता है। संवाद की कुछ उक्तियों में टॉपिकीकरण की स्थिति दिखायी देती है। उदहारण के लिए *'मुसुक-मुसुक हाँइस के परी बोलल'* तथा *'कि बर खोजबे तोई भाबे नाई पारेहे'* इन दोनों पंक्तियों को देख सकते हैं। सामान्य भाषिक संरचना के नियमानुसार इन्हें क्रमशः 'परी मुसुक-मुसुक हाँइस के बोलल' तथा 'तोई कि बर खोजबे भाबे नाई पारेहे' के रूप में होना चाहिए। इसके अलावा पूरे संवाद में कई स्थानों पर पुनरुक्तियों का प्रयोग हुआ है। यथा- *'मुसुक-मुसुक', 'भाबते-भाबते', 'जाते-जाते'* में पूर्ण पुनरुक्ति है तथा *'धन-संपत्ति'* (हिंदी-संस्कृत) में आधिक्यबोधक पुनरुक्ति है।

अनुशीलन 2:

"'शैतान आलो, शैतान आलो बोईलके चाइरोदिगे हाल्ला होई गेल। 'दुमूर, चाईर हाँथ के शैतान देखबा, आवा ग' (गअ) बोईलके हाल्ला होवे लागल।' हाल्ला शुईन के बहुत मानुष जमा होल। धीमा आपन शक्ति कुलाई माने चिल्लाई-चिल्लाई के बोलल- 'हामे धीमा लागि। तोहनि बिश्वास कोर।' मगर केउ ओकरा बिश्वास नाई करल। सबकोई उकरा मारे लागल आर मारते-मारते ओकरा मराई देल। मरेक समय धीमाके मोने परल ठाकुर के बात 'बड़ी दुखे उ चिंता करल जे आगर ठाकुर के बात शुनले जरूर हामर एई दशा नाई हतलः।'"[16]

आशय है कि परी से वरदान में दो सिर और चार हाथ वाला शरीर प्राप्त करने के बाद धीमा जब अपने गाँव लौटा तब चारों ओर भय का माहौल हो जाता है। गाँव वाले शोर मचाते हुए कहते हैं कि 'शैतान आया, शैतान आया। दो सिर और चार हाथों वाले शैतान को देखो, सभी आओ।' इस तरह से चारों तरफ कोलाहल मचने लगा। शोर सुनकर बहुत से लोग एकत्रित हुए। उस समय धीमा यथाशक्ति चिल्लाकर लोगों को विश्वास दिलाने का प्रयत्न करने लगा की 'मैं धीमा हूँ। तुमलोग विश्वास करो।' लेकिन उस भीड़ ने मार-मारकर धीमा की जान ले ली। अंतिम क्षणों में धीमा को ठाकुर की बात याद आयी। 'अत्यंत दुखी होकर वह सोचने लगा कि यदि ठाकुर की कही बात उसने मान ली होती तो आज उसकी ऐसी दुर्दशा नहीं होती।'

उक्त संवाद में प्रोक्ति के अंतर्गत गत्यात्मक संलाप की स्थिति सहज दृष्टव्य है। संवाद में *'शैतान'* और *'जरूर'* अरबी शब्द हैं। इसके अलावा *'मगर', 'बड़ी', 'बात', 'बहुत', 'शक्ति', 'विश्वास', 'समय', 'दशा'* आदि हिंदी तथा संस्कृत भाषा में प्रयुक्त होने वाले मानक शब्द हैं। इसमें भोजपुरी, बांग्ला और असमिया भाषा के प्रचलित शब्दों का भी व्यवहार देखा जा सकता है। जैसे- *'ओकरा'* (उसे), *'मारे लागल'* (पीटने लगा) दोनों शब्द भोजपुरी के हैं, *'केउ'* (कोई) और *'दुमूर'* (दो सिर) क्रमशः बांग्ला तथा असमिया भाषा के शब्द हैं। सादरी भाषा के वाक्यों में इन सभी भाषाओं के शब्दों के प्रयोग से कोड-मिश्रण और बहुभाषिकता की सूचना मिलती है। इसी तरह से *'दु'* (दो), *'चाइर'* (चार) संख्यासूचक तथा *'हाथ', 'मूर'* (सिर) शरीर-रचना विज्ञान संबंधी प्रयुक्तियाँ हैं। इस संवाद में *'चिल्लाई-चिल्लाई'* तथा *'मारते-मारते'* में पूर्ण पुनरुक्ति है जो क्रिया के रूप में प्रयुक्त हुआ है। उक्त लोककथा के संवाद में कुछ शब्दों के निम्न कोड रूप का प्रयोग हुआ है जिससे भाषाद्वैत की स्थिति उत्पन्न हुई है। उदाहरण के लिए *'हाल्ला', 'शुईन', 'आगर'* आदि शब्द प्रमुख हैं। इन शब्दों का मानक रूप क्रमशः 'हल्ला', 'सुन' तथा 'अगर' है। इसके अलावा *'मरेक समय धीमाके मोने परल ठाकुर के बात'*

पंक्ति में हम टॉपिकीकरण की स्थिति देख सकते हैं। सामान्य वाक्य-संरचना के अनुसार इस वाक्य का रूप कुछ इस प्रकार होगा- 'मरेक समय धीमाके ठाकुर के बात मोने परल'। इस वाक्य में 'मोने परल' पर विशेष बल देने के लिए उसे उसके निर्धारित स्थान से स्थानांतरित किया गया है।

* *'सात भाई एक बहिन' (सात भाई और एक बहन)*

चाय श्रमिक समाज में प्रचलित यह लोककथा मूलतः एक पारिवारिक कथा है। इसे चाय श्रमिक 'रुदन काह्नि' अर्थात् 'रोदन कहानी' कहते हैं। यह लोककथा सात भाइयों और उनकी एकमात्र बहन पर केंद्रित है। इस लोककथा में आत्मीय संबंधों और संवेदनाओं को ताक पर रखकर किस प्रकार स्वार्थ-सिद्धि को प्रमुखता दी जाती है उसे दर्शाया गया है। इस दृष्टि से यह लोककथा वर्तमान संदर्भ में प्रासंगिक है। आज लोग अपने छोटे-बड़े स्वार्थ के लिए मानवीय मूल्यों का हनन कर देते हैं। इस लोककथा के आरंभ में अत्यंत कम उम्र में ही माता-पिता के देहावसान के कारण सातों भाइयों ने मिलकर अपनी बहन का लालन-पालन किया। इस परिवार का भरण-पोषण शिकार पर ही आधृत था। सातों भाई जब जंगल की ओर शिकार के लिए निकल पड़ते थे तब छोटी बहन घर-बार, खाद्य सामग्री आदि तैयार करती थी। एक दिन साग काटते हुए छोटी बहन की उंगली कट गयी। बहन ने खून से सने साग को पकाकर भाइयों को खिला दिया। सभी भाइयों ने खूब चाव से उस दिन भोजन ग्रहण किया और अंत में बहन से भोजन के अत्यधिक स्वादिष्ट होने का कारण जानकर वे सभी अचंभित हो गये। उनलोगों ने सोचा कि जब बहन का खून इतना स्वादिष्ट हो सकता है तो उसका माँस कितना स्वादिष्ट होगा। फिर सभी भाइयों ने मिलकर बहन को मारकर खाने की योजना बनायी किन्तु सबसे छोटे भाई ने इस योजना में भाग लेने से मना कर दिया। छोटी बहन के प्रति स्नेहवश उसने स्वयं को बारंबार रोकने का प्रयास किन्तु बड़े भाइयों के आदेश का अनादर कर पाना उसके लिए असंभव था। दूसरे ही दिन सातों भाई अपनी बहन को धोखे से जंगल की ओर ले गये। बहन को जब भाइयों की इस मनसा का भान हुआ तो उसके लिए वह क्षण हृदय विदारक था। जब सभी भाई बारी-बारी से तीर-धनुष से निशाना साधते तो बहन क्रंदन करते हुए गीत गाने लगती थी। अंततः सबसे छोटे भाई के हाथों ही उसकी मृत्यु होती है। जंगल में सभी भाई अपनी बहन के शरीर के माँस को खाते हैं किन्तु सबसे कनिष्ठ भाई माँस न खाकर शेष भाइयों की नज़रों से बचकर मछली और केकड़ा खा लेता है। तत्पश्चात् बहन के माँस और हड्डियों को उस स्थान पर गाड़ देता है।

कुछ दिनों के बाद वह स्थान बाँस के झुरमुटों से भर जाता है। एक दिन एक साधु उस स्थान पर शौच के लिए रुकता है। उस दौरान शिकायत के स्वर में एक युवती की आवाज सुनकर वह हतप्रभ हो जाता है। उसी बाँस के झुरमुट से बाँस काटकर जोगी केंद्रा अर्थात् सारंगी जैसा ही लोक वाद्ययंत्र बनाकर उसे बजाते हुए गाँव-गाँव में याचना करने लगा। इसी तरह जब साधु याचना करते हुए सातों भाइयों के गाँव पहुँचा तो उस वाद्ययंत्र से सहसा क्रंदित स्वर में गीत निकलने लगा जबकि सबसे कनिष्ठ भाई के द्वार पर पहुँचने पर उस वाद्य से मधुर स्वर में भाई के प्रति प्रेम भाव से संपृक्त गीत का वादन होने लगा। कनिष्ठ भाई ने याचक से वह वाद्य ले लिया। प्रति दिन जब वह शिकार से लौटता तो पका हुआ भोजन और घर को अत्यंत व्यवस्थित ढंग से रखा पाता। एक दिन ग़ौर करने पर उसे यह ज्ञात हुआ कि उस वाद्ययंत्र से एक अति सुंदर युवती निकलती है और पूरे घर का काम संपन्न कर पुनः उस वाद्ययंत्र में समा जाती है। वह भाई अपनी सबसे बड़ी भाभी के कहे अनुसार युवती के वाद्ययंत्र से निकलते ही उस वाद्ययंत्र को जला देता है। उसके बाद तुलसी के जल को छिड़कते ही वह सुंदर युवती एक आम लड़की अर्थात् उसकी बहन के स्वरूप को प्राप्त कर लेती है। उसके बाद से दोनों सहर्ष जीवन व्यतीत करने लगते हैं। कुलमिलाकर इस कथा में बड़े ही चमत्कारपूर्ण ढंग से स्वार्थ के बनिस्पत प्रेम को विजयी बनाकर कहानी का सुखांत किया गया है। ग्रामीण परिवेश, केंद्रा जैसे लोक वाद्ययंत्र की चमत्कृत ध्वनि से कथा जीवंत हो उठी है। इसके अलावा तुलसी जल के प्रभाव से असाधारण युवती का साधारण हो जान दरअसल में चाय जनगोष्ठी समाज के लोक विश्वास का सूचक है। ध्यातव्य है कि चाय जनगोष्ठी के अलग-अलग समुदायों में इस कहानी की कथावस्तु में भिन्नता व्याप्त है। प्राप्त तथ्य सामग्री के आधार पर उपर्युक्त रूदन कथा के कुछ अंशों का समाजभाषिक विश्लेषण यहाँ प्रस्तुत है-

“बिंध बिंध दादा

छाति ताँइक ताँइक दादा छाति ताँइक ताँइक

तोरे काँड़ तोरे धेनुक अरण्य बने जाय दादा

अरण्य बने जाय

x x x x

बिंध बिंध दादा

छाति ताँइक ताँइक दादा छाति ताँइक ताँइक

तोरे काँड़ तोरे धेनुक अरण्य बने जाय दादा

छाति में जाय दादा

छाति में जाय

x x x x

नाई बाजरे केंद्रा

ईत' (ईतअ) लागे दुशमन भाईर घर

दया मायार डोर छिड़े

कुले जे दाग लागाल

x x x x

बाज बाजरे केंद्रा

ईत' (ईतअ) लागे भालो दादार घर

मनेर कोथा मनेर बेथा जुगे जुगे राखेये हामार।"[17]

उद्धृत पंक्तियों का भाव यह है कि जब ज्येष्ठ छह भाई बहन की ओर तीर साधते हैं तो बहन रोते हुए कहती है कि उसके सीने के भेदन हेतु जो निशाना लगाया गया है वह व्यर्थ जाएगा। उन सभी भाइयों तीर-धनुष से किये गये प्रहार विफल होकर अरण्य की ओर चले जाएँ परन्तु वहीं जब सबसे कनिष्ठ भाई विवश होकर बाण का संधान करता है तो बहन उस बाण को अपने सीने में सहेजना चाहती है। इसी तरह से कथा में जब साधु अथवा योगी लोक वाद्ययंत्र को बजाते हुए गाँव में प्रवेश करता है तो शेष भाइयों के द्वार पर पहुँचने पर उस वाद्ययंत्र से व्यथित स्वर में यह अनुगूंज सुनायी देती है कि ये सभी भाई शत्रु हैं। इनलोगों ने नैतिकता का अतिक्रमण कर अपनी क्षणिक स्वार्थ-सिद्धि हेतु अपनी ही बहन को मृत्यु के घाट उतार दिया। प्रेम और संवेदना के धागे को तोड़ समस्त कुल को कलंकित किया है जबकि सबसे छोटे भाई के द्वार पर जाते ही उस वाद्ययंत्र से मधुर ध्वनि के निष्पादन हेतु तीव्र उत्कंठा दिखायी देती है। वह बहन अपने अत्यंत प्रिय भ्राता के प्रति आत्मीयता को दर्शाते हुए कहती है कि यह तो अच्छे भाई का घर है। अतः वाद्ययंत्र को यहाँ बजना चाहिए। यही भ्राता तो मेरे मन की सारी व्यथा को समझते हैं और मुझे सदैव स्नेह देते हैं। इन पंक्तियों के माध्यम से निम्न स्तरीय स्वार्थ की सिद्धि हेतु किस तरह से लोग पारिवारिक तथा मानवीय मूल्यों का हनन करते हैं उसे दर्शाने का प्रयास किया गया है।

प्रस्तुत पंक्तियों में भाइयों के सम्मुख बहन द्वारा करुण स्वर में कही गयी बातें प्रोक्ति के स्तर पर मुख्यतः द्वयाभिमुख स्थिर संलाप की उदाहरण हैं। इसके अलावा असमिया, बांग्ला, भोजपुरी आदि भाषाओं के शब्दों का प्रयोग भी यहाँ दृष्टव्य है। जैसे- 'बिंध' (भेदन), 'काँड़' (तीर), 'धेनुक' (धनुष) ये सभी असमिया भाषा में प्रयुक्त होने वाले शब्द हैं। इसके साथ ही 'बने', 'बाजरे', 'छिड़े', 'कुले', 'मायार', 'मनेर', 'बेथा' आदि बांग्ला भाषा के शब्द हैं। 'कुल', 'माया', 'मन' आदि संस्कृतनिष्ठ हिंदी शब्द हैं किन्तु इन शब्दों के उच्चारण और इनमें युक्त कारक चिह्नों को देखा जाए तो ये मूलतः बांग्ला भाषा में प्रयुक्त होने वाले शब्द जान पड़ते हैं। इन पंक्तियों में कुछ ऐसे शब्दों का भी प्रयोग हुआ है जिनका असमिया तथा बांग्ला दोनों ही भाषाओं में प्रयोग किया जाता है। जैसे- 'दादा' (भईया), 'बने' (वन में), 'नाई' (नहीं), 'भाल' (अच्छा), 'कोथा' (बात) आदि। इसके अतिरिक्त 'छाती' भोजपुरी का शब्द है जिसे असमिया के प्रभावस्वरूप 'छाति' (सीना) लिखा गया है तथा 'दाग' फारसी का और 'जाय', 'डोर' आदि हिंदी शब्द हैं। ये सभी भिन्न भाषाई शब्द कोड-मिश्रण तथा बहुभाषिकता की स्थिति को दर्शाते हैं। रूदन कहानी के उपर्युक्त अंश में 'छाति में जाय' यह पूरी पंक्ति भोजपुरी भाषा की है जिसका प्रयोग बागानिया भाषा के वाक्यों के साथ इस गीत कथा में हुआ है। अतः यहाँ कोड-अंतरण की स्थिति है। इसके साथ ही 'बिंध-बिंध', 'ताँइक-ताँइक', 'जुगे-जुगे' तथा 'अरण्य-बने' में हम पुनरुक्तियों की प्रवृति सहज ही देख सकते हैं। इनमें 'बिंध-बिंध', 'ताँइक-ताँइक', 'जुगे-जुगे' में पूर्ण पुनरुक्ति है क्योंकि यहाँ एक ही शब्द की दो बार आवृति हुई है तथा 'अरण्य-बने' (संस्कृत-बांग्ला) में आधिक्यबोधक पुनरुक्ति है। इनमें पूर्ण पुनरुक्ति का प्रयोग 'अधिकता' के संदर्भ में हुआ है तथा 'अरण्य-बने' इस दोनों ही शब्दों का अर्थ तो एक है किन्तु ये दोनों ही शब्द भिन्न भाषाओं यथा- संस्कृत और बांग्ला में प्रयुक्त होते हैं। 'धेनुक' तथा 'काँड़' औजार विषयक प्रयुक्तियों के उदाहरण हैं तथा 'दया', 'माया' आदि को मनुष्य के संवेदनात्मक भाव संबंधी और 'दादा', 'भाई' आदि को रिश्ते-नाते की प्रयुक्तियों में शामिल किया जा सकता है। कथा की पंक्तियों में प्रयुक्त 'दुशमन' शब्द निम्न कोड का है जिसका मानक रूप 'दुश्मन' है। अतः यहाँ भाषाद्वैत की स्थिति को सहज ही देख सकते हैं। इसके अलावा 'मनेर कोथा मनेर बेथा जुगे जुगे राखेये हामार' यह पंक्ति सामान्य भाषिक संरचना के नियमों के अनुरूप नहीं है। इसका मानक रूप 'हामार मनेर कोथा मोनेर बेथा जुगे जुगे राखेये' होगा। अतः यह पंक्ति टॉपिकीकरण की स्थिति का उदाहरण है। इस वाक्य में 'मनेर कोथा' पर बल देने के लिए उसे वाक्यारंभ में रखा गया है।

उपर्युक्त सभी विवेचनों के आधार पर निष्कर्षतः यह कहा जा सकता है कि चाय जनगोष्ठी में प्रचलित लोककथाएँ इस समाज के विभिन्न पक्षों और संदर्भों को उद्घाटित करती हैं। अधिकतर लोककथाओं में पेड़-पौधों और पशु-पक्षियों के माध्यम से मानव-मन के भावों और अनुभूतियों की अभिव्यक्ति हुई है। इसके साथ ही चाय जनगोष्ठी में प्रचलित मिथक, परंपरागत रीति-नीति, विभिन्न संस्कारों तथा विश्वासों का बोध होता है। विशेषकर लोककथाओं की भाषा में भिन्न भाषाओं जैसे- असमिया, बांग्ला, भोजपुरी, हिंदी तथा संस्कृत के मानक शब्दों के प्रयोग से कोड-मिश्रण तथा बहुभाषिकता की विशेषता स्पष्टतः उभरकर आयी है। कहीं-कहीं कोड-अंतरण और कोड-बॉरोइंग की स्थिति भी सहज दृष्टव्य है। इसी तरह से कई लोककथाओं की भाषा में भाषा के निम्न कोड के प्रयोग से भाषाद्वैत की स्थिति का पता चलता है। विभिन्न स्थानों पर पुनरुक्तियों तथा प्रयुक्तियों के प्रयोग से भाषा और अधिक विशिष्ट प्रतीत होती है। वाक्यों के किसी एक विशेष शब्द पर अतिरिक्त बल देने के उद्देश्य से उसे वाक्य-संरचना के सामान्य नियमों के बरअक्स वाक्य के प्रारंभ में रखा गया है जिससे टॉपिकीकरण की स्थिति का बोध होता है। प्रोक्ति के स्तर पर भी देखा जाए तो प्रत्यक्ष अथवा परोक्ष रूप से पात्रों के संवाद की स्थिति के कारण यथास्थान एकालाप, स्थिर तथा गत्यात्मक संलाप की प्रवृत्ति का भान होता है। असमिया भाषा के विशेष प्रभाव के कारण बागानिया भाषा में प्रचलित इन लोककथाओं की भाषा में भाषाई विकल्पन का भी खूब प्रयोग मिलता है। कुलमिलाकर हम यह कह सकते हैं कि चाय जनगोष्ठी में प्रचलित इन लोककथाओं की भाषिक-संरचना एवं उनकी अंतर्वस्तु से इस समुदाय की सामाजिक संरचना का स्पष्टतः बोध हो जाता है। ये लोककथाएँ एक तरह से चाय जनगोष्ठी समाज की तहरीर हैं, सच्ची तस्वीर हैं।

संदर्भ सूची-

1. तथ्यदाता: श्रीमती रीता गोवाला, दुलियाबाम चाह बागीचा, डिब्रूगढ़ (दिनांक: 22.10.2022)
2. वही
3. तथ्यदाता: श्री प्रकाश कुर्मी, हिलिखागुड़ी गाँव, तिनसुकिया (दिनांक: 17.12.2019)
4. वही
5. तथ्यदाता: श्री लिलेश्वर कुर्मी, जेराई नलनीहोला गाँव, डिब्रूगढ़ (दिनांक: 17.09.2021)
6. वही
7. तथ्यदाता: श्रीमती रीता गोवाला, दुलियाबाम चाह बागीचा, डिब्रूगढ़ (दिनांक: 22.10.2022)
8. वही
9. वही
10. वही
11. (सं.) बसंत राजोवार, गणेश चंद्र कुर्मी रचनावली, पृष्ठ संख्या. 438
12. वही, पृष्ठ संख्या. 438
13. वही, पृष्ठ संख्या. 440
14. वही, पृष्ठ संख्या. 441
15. वही, पृष्ठ संख्या. 453
16. वही, पृष्ठ संख्या. 455
17. तथ्यदाता: श्री मकर सिंह भूमिज, लेसेंकार बंगाली गाँव, तिनसुकिया (दिनांक: 28.11.2022)

6.2 लोक नाट्य

चाय जनगोष्ठी में लोक नाट्य के लिए लोकपाला व लोकजात्रा शब्द भी प्रचलित है। वैसे तो उत्तर प्रदेश, बिहार, झारखंड, पश्चिम बंगाल, उड़ीसा तथा छत्तीसगढ़ आदि राज्यों में लोक नाट्य की सुदीर्घ परंपरा रही है। इन अंचलों से असम आये चाय श्रमिक समुदाय में भी रामायण-महाभारत के विभिन्न प्रसंगों, श्री जगन्नाथ प्रभु से संबंधित लोकपाला तथा अन्य सामाजिक संदर्भों से संबंधित लोक नाट्यों का उल्लेख मिलता है। किंतु ब्रिटिश सरकार व चाय उद्योग के शोषण, दमन, उत्पीड़न आदि विभिन्न कारणों से चाय जनगोष्ठी की सांस्कृतिक गतिविधियों में काफी चुनौतियाँ आयीं। इसके परिणामस्वरूप लोक नाट्यों का प्रचलन लगभग समाप्त होने लगा तथा कालांतर में ये लोक प्रचलित नाट्य लगभग विस्मृत हो गये। क्षेत्र-सर्वेक्षण से यह ज्ञात हुआ कि पश्चिम बंगाल के कुर्मी, महतो, बाउरी, राजोवार आदि समुदायों में 'शिव गाजन' अथवा 'शिव गर्जन' नामक लोक नाट्य का प्रचलन था। यह मूलतः एक नृत्य नाटक है जिसमें अलग-अलग पात्र गीत-नृत्य के माध्यम से नाटक को आगे बढ़ाते हैं। इस नाटक का प्रचलन पश्चिम बंगाल के सीमांत अंचलों, उड़ीसा तथा झारखंड में है। इसके अलावा 'ललिता-शबर पाला', 'बाघाम्बर पाला', 'शीतलाम मंगल' आदि लोकपाला के प्रचलन का भी उल्लेख मिलता है। छत्तीसगढ़ी लोक नाट्य के अंतर्गत 'रामचंद्रजी', 'सीता-माई', 'लक्ष्मण भाई' आदि प्रमुख हैं। इस तरह हम देखते हैं कि चाय जनगोष्ठी में लोक नाट्य की परंपरा तो थी किन्तु आज यह परंपरा विलुप्त हो चुकी है। वर्तमान समय में ऐसे किसी भी लोक नाट्य के मंचन अथवा प्रचलन का साक्ष्य नहीं मिलता है। यह कहना अनुचित नहीं होगा कि चाय जनगोष्ठी में प्रचलित लोक नाट्य केवल नामोल्लेख तक सिमट कर रह गये हैं। इन लोक प्रचलित नाटकों की कथावस्तु, पात्र-योजना तक लोग भूलने लगे हैं। हाँ, आज इस समाज में व्यक्तिगत तौर पर लिखे गये नाटकों का अधिक प्रचलन है। सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक पृष्ठभूमि को लेकर अनेक नाटक प्रचलित हैं। इसके अलावा कुछ मनोरंजन प्रधान नाटक भी लिखे गये हैं। आजकल इन्हीं नाटकों का मंचन होता है।

बहरहाल, चाय जनगोष्ठी के लोधि, खड़िया तथा शबर आदिवासी समाज में प्रचलित लोक नाट्य 'ललिता-शबर पाला' अत्यंत लोकप्रिय रहा है। 'असम चाह जनगोष्ठी साहित्य सभा' के संस्थापक स्वर्गीय श्री गणेश चंद्र कुर्मी ने चाय जनगोष्ठी के लोक साहित्य पर अनुसंधानपरक मंतव्य दिये। बसंत राजोवार द्वारा संपादित 'गणेश चंद्र कुर्मी रचनावली' में संकलित एक आलेख में 'ललिता-शबर पाला' नाट्य का संक्षिप्त

परिचय तथा कुछ अंशों का उल्लेख मिलता है। अतः इस उप-अध्याय में वहीं से साक्ष्य लेकर 'ललिता-शबर पाला' लोक नाट्य के कुछ अंशों का समाजभाषिक दृष्टि से अध्ययन-विश्लेषण किया जाएगा। दरअसल, शबर आदिवासी समुदाय का उल्लेख रामायण, महाभारत आदि महाकाव्यों में मिलता है। रामकथा की प्रसिद्द पात्र सबरी का संबंध इसी समुदाय से है। वही सबरी जो अपने आराध्य की प्रतीक्षा में नित प्रति मीठे बेर चखकर रखती है। सबरी जैसी भक्ति, प्रतीक्षा और श्रीराम की भक्त वत्सलता रामायण का वह मर्मस्पर्शी प्रसंग है जो अतःस्थल की गहराइयों को स्पर्श करता है। इसी तरह से श्रीकृष्ण के पैरों में तीर से प्रहार करने वाला जरा शबर भी इसी आदिवासी समाज से था। उसके प्रहार के कारण श्रीकृष्ण का महाप्रयाण हुआ था। इसके बाद जरा शबर के पुत्र विश्ववसु शबर ने ही सर्वप्रथम प्रभु जगन्नाथ के नील माधव रूप की पूजा की थी। तब से लेकर आज तक जरा शबर के वंशधर श्री जगन्नाथ प्रभु की सेवा तथा भोग-प्रसाद बनाने में अग्रणी भूमिका निभाते हैं। प्रस्तुत लोक नाट्य 'ललिता-शबर पाला' में प्रभु जगन्नाथ के नील माधव रूप की महिमा तथा जरा शबर के पुत्र विश्ववसु शबर की अनन्य भक्ति का वर्णन मिलता है। वैसे तो यह नाटक प्रमुख रूप से उड़िया भाषा में है किंतु इसमें संस्कृत, बांग्ला, भोजपुरी, असमिया भाषा का प्रभाव भी देखा जा सकता है।

इस लोक नाट्य का प्रारंभ पांडव वंश के राजा परीक्षित और सुक मुनि के संवाद से होता है। सुक मुनि महाराज परीक्षित को श्री जगन्नाथ की कथा सुनाते हैं। इस नाटक के प्रमुख पात्र हैं- राजा इद्रद्युम्न, ब्राह्मण कुमार विद्यापति, विश्ववसु शबर , विश्ववसु की पुत्री ललिता। संपूर्ण लोक नाट्य की कथावस्तु के माध्यम से आदिवासी संस्कृति में आर्य संस्कृति के हस्तक्षेप को रेखांकित किया गया है। राजा इंद्रद्युम्न द्वारा शबर पर किया गया अत्याचार समय-समय पर आदिवासी समुदायों पर होने वाले अत्याचारों व शोषण को दर्शाता है। समाज में व्याप्त वर्ण-व्यवस्था तथा धार्मिक-आनुष्ठानिक कार्यों में उच्च वर्ण के लोगों के आधिपत्य का इस लोक नाट्य के जरिये प्रस्तुतिकरण हुआ है। 'ललिता-शबर पाला' लोक नाट्य के कुछ अंश दृष्टव्य हैं-

"धन्य धन्य आई जे अक्षदेशे राजा।
विष्णुक न-पाई से छाड़िल पूजा-सेवा।
इंद्रद्युम्नू नाम ततार बर विष्णु भक्त।
विष्णुक न पाई से होईल आरत।
चारिदिगकू राजा दूत से पेशिला।

विष्णुक पाषाणकु बेगे आनह बोईला।।"[1]

प्रस्तुत पंक्तियों का आशय यह है कि अक्षदेश के राजा इंद्रद्युम्न भगवान विष्णु के अनन्य भक्त थे। भगवान श्रीहरि को न पाकर उन्होंने अपने सभी सैनिकों को चारों दिशाओं में भगवान विष्णु की खोज में भेज दिया। राज आज्ञा को शिरोधार्य कर सभी सैनिक भगवान विष्णु की खोज में दिग-दिगंतर भ्रमण करने लगे। कुछ समय के पश्चात् राजा के सभी सैनिक निराश व हताश होकर पुनः अपने राज्य लौट आये किंतु पश्चिम दिशा की ओर भेजे गए ब्राह्मण कुमार विद्यापति जगलों में भटकते हुए विश्ववसु शबर के गृह में प्रवेश कर गये।

उपर्युक्त नाट्यांश में राजा अपने सैनिकों को आदेश देते हैं| अतः यहाँ द्वयाभिमुख स्थिर संलाप की स्थिति है| इसके साथ ही *'पूजा-सेवा', 'दूत', 'राजा'* तथा *'भक्त'* हिंदी के शब्द हैं तथा *'छाड़िल'* अर्थात् 'छाड़िलो' बांग्ला भाषा में 'छोड़ना' क्रिया के लिए प्रयुक्त होता है। *'आरत'* तथा *'पाषाण'* शब्द संस्कृत भाषा के हैं जिनका अर्थ क्रमशः 'चिंतित या परेशान रहना' तथा 'पत्थर' है। किंतु संस्कृत के 'पाषाण' शब्द में उड़िया के 'कु' विभक्ति के प्रयोगवश इसे संस्कृतनिष्ठ उड़िया शब्द कहना उपयुक्त होगा। *'बेगे'* शब्द असमिया तथा बांग्ला दोनों ही भाषाओं में द्रुत गति से किसी काम को करने के संदर्भ में प्रयुक्त होता है। इसके अतिरिक्त *'ततार'* (उनका), *'बर'* (बड़ा), *'होइल'* (हुआ), *'चारिदिगकू'* (चारों दिशाओं में) तथा *'बोईला'* (संदर्भगत अर्थ-बोला) आदि प्रमुखतः उड़िया भाषा के ही शब्द हैं। *'पेशिला'* मूलतः उड़िया के 'पसिला' (भेजना) शब्द के निम्न कोड के रूप में प्रयुक्त हुआ है। अतः यहाँ भाषाद्वैत की स्थिति है। मूलतः उड़िया भाषा में प्रचलित लोक नाट्य की इन पंक्तियों में संस्कृत, हिंदी, बांग्ला, असमिया भाषा के शब्दों के प्रयोग के कारण कोड-मिश्रण की स्थिति को देखा जा सकता है। साथ ही बहुभाषिकता की स्थिति भी यहाँ सहज ही दृष्टव्य है। *'धन्य-धन्य'* में पूर्ण पुनरुक्ति है। *'पूजा', 'सेवा', 'भक्त', 'विष्णु'* आदि शब्द हिंदू धर्म संबंधी प्रयुक्तियाँ हैं। *'विष्णुक न-पाई से छाड़िल पूजा-सेवा'* पंक्ति को उड़िया भाषा की सामान्य वाक्य-संरचना (कर्ता+कर्म+क्रिया) के अनुसार 'विष्णुक न-पाई से पूजा-सेवा छाड़िल' होना चाहिए। जबकि यहाँ 'छाड़िल' क्रिया पर बल देने हेतु उसे उसके नियत स्थान से स्थानांतरित कर उसे कर्म से पूर्व रखा गया हैं। अतः यहाँ टॉपिकीकरण का गुण है।

"ब्राह्मण बोइले तुम्भे जातिरे शबर।
केमंते होइबि बिभा दुहिता तुम्भर।।
ऊपर बंशरे मोर पिता जन्मिशिला।

एक नाराजरे बासुदेव कु माइला।।

मृग बोली मोर पिता छाड़ि देले बाण।

बाजिला नाराज जाई गोविंद पदेन।।"[2]

उपर्युक्त पंक्तियाँ लोक नाट्य के उस प्रसंग से संबंधित हैं जब ब्राह्मण कुमार विद्यापति के साथ विश्ववसु शबर की एकमात्र कन्या ललिता का प्रेम-संबंध अत्यंत प्रगाढ़ हो जाता है। विश्ववसु को जब इनके संसर्ग की सूचना मिलती है तब वे स्वयं विद्यापति के सम्मुख अपनी पुत्री के विवाह का प्रस्ताव रखते हैं। प्रत्युत्तर में विद्यापति कहते हैं कि उच्च वर्ण अर्थात् ब्राह्मण कुमार और निम्न वर्ण यानी शबर आदिवासी कुल की कन्या का विवाह कैसे संभव हो सकता है। तब विश्ववसु अपने कुल का परिचय देते हुए कहते हैं कि उनके पिता ने श्रीकृष्ण के पैरों को मृग समझकर शिकार हेतु बाण का संधान कर दिया था। इससे श्रीकृष्ण का पृथ्वी लोक से महाप्रयाण हुआ। कृष्ण के आशीर्वाद से ही उनके पिता जरा शबर को बैकुंठ धाम में भगवान विष्णु के श्री चरणों में स्थान मिला।

इन पंक्तियों से यह ज्ञात होता है कि समाज में कैसे प्रेम से ऊपर जातिभेद को वरीयता दी गयी है तथा 'सबार ऊपर मानुष सत्य' की अवधारणा को प्रश्नांकित किया गया है। उक्त प्रसंग के माध्यम से समाज द्वारा निर्धारित वर्ण-व्यवस्था संबंधी नियम किस प्रकार मानव संबंधों को विनियमित करते हैं, इसका सहज बोध होता है। नाटक के इस संवाद में *'बोइले'* (बोला), *'केमंते'* (कैसे), *'होइबि'* (होगा), *'बिभा'* (विवाह), *'तुम्भर'* (तुम्हारी/ तुम्हारा), *'कु'* (को), *'माइला'* (मारना), *'बोली'* (समझकर), *'मोर'* (मेरा), *'छाड़ि'* (छोड़ना), *'बाजिला'* (बजना) आदि शब्द नाटक की मूल भाषा उड़िया के हैं। इसके अलावा इन पंक्तियों में *'ब्राह्मण'*, *'दुहिता'*, *'मृग'*, *'बाण'* आदि शब्द संस्कृत के हैं तथा *'ऊपर'*, *'पिता'* हिंदी शब्द हैं। *'नाराज'* अरबी का 'नाराज़' शब्द है। *'जातिरे'*, *'एक'*, *'जन्मिशिला'*, *'बासुदेव'* आदि शब्द उड़िया, बांग्ला तथा असमिया तीनों ही भाषाओं में समान रूप से प्रयुक्त होने वाले शब्द हैं। *'देले'*, *'जाई'* ये दोनों शब्द भोजपुरी तथा उड़िया भाषा में 'देना' और 'जाना' क्रिया के लिए प्रयुक्त होते हैं। अतः सभी भिन्न भाषाई शब्द यहाँ कोड-मिश्रण की स्थिति को दर्शाते हैं तथा बहुभाषिकता की प्रवृत्ति की ओर भी संकेत करते हैं। *'बासुदेव'* को 'वासुदेव' का निम्न कोड कह सकते हैं। इसी तरह से नाटक के इस अंश में *'जातिरे'*, *'वंश'*, *'ब्राह्मण'*, *'शबर '* आदि आस्मितासूचक तथा *'पिता'*, *'दुहिता'* संबंधसूचक प्रयुक्तियाँ हैं। *'केमंते होइबि बिभा दुहिता तुम्भर'*, *'ऊपर बंशरे मोर पिता जन्मिशिला'*, *'मृग बोली मोर पिता छाड़ि देले बाण'* पंक्तियों में टॉपिकीकरण की स्थिति है। इन्हें उड़िया भाषा

की सामान्य भाषिक संरचना के अनुरूप क्रमशः 'तुम्भर दुहिता बिभा केमंते होइबि', 'मोर पिता ऊपर बंशरे जन्मिशिला', 'मोर पिता मृग बोली बाण छाड़ि देले' के रूप में होना चाहिए लेकिन इन वाक्यों में विभिन्न घटकों पर जोर देने के लिए उन्हें उनके निर्धारित स्थान से सायास स्थानांतरित किया गया है। जैसे- पहले वाक्य में प्रश्नसूचक शब्द 'केमंते' को वाक्य के आरंभ में कर्ता के स्थान पर रखा गया है जबकि कर्ता 'तुम्भर' को बिल्कुल अंत में क्रिया के स्थान पर रखा गया है। इसी तरह दूसरे वाक्य में हम देखते हैं कि 'उच्च वंश' पर बल देने के लिए 'ऊपर बंशरे' पद को कर्ता के स्थान पर वाक्यारंभ में लाया गया है। तीसरे वाक्य में 'मृग' पर जोर देने के लिए उसे कर्ता के स्थान पर रखा गया है। निश्चित रूप से भाषिक अवयवों के इस क्रम परिवर्तन का यानी टॉपिकीकरण का मूल उद्देश्य वाक्य में विशिष्ट प्रभाव उत्पन्न करने हेतु किया गया है। विद्यापति और विश्ववसु शबर के बीच हुए इस संवाद में वक्ता और श्रोता दोनों की भूमिकाएँ क्रमशः बदल रही हैं। अतः यहाँ गत्यात्मक संलाप है।

"रात्रि दुई खंड थाये पिता तोर जाए।
दुई प्रहरकु आसि गृहरे मिलये।।
बनन्तरे बंदी नील माधव मूरति।
ताहाकु जे पिता मोर सर्वदा भजंति।।
आँखिरे अंध पुटलि बांधिन देबई।
देब देखाईबि बाट देखाईबि नाहि।।
कंदमूल खन्डिये जे शवर घेनिला।
खाउ खाउ देव मोर बोलिन बोईला।।
प्रतिदिन कंद-मूल देले निज हस्ते।
खाउचंतित हस्त पाति देव जगन्नाथ।।"[3]

उद्धृत पंक्तियों में ललिता और विद्यापति के विवाह के बाद के प्रसंग का उल्लेख किया गया है। विवाहोपरांत विद्यापति अपनी पत्नी के साथ विश्ववसु के आश्रम में रहने लगा। विद्यापति नितदिन प्रातः विश्ववसु को अरण्य जाते देखता था। और, वहाँ से लौटकर आने के क्रम में लाये गये कंदमूल सभी प्रसाद के रूप में ग्रहण करते थे। यह घटना विद्यापति के लिए आश्चर्यजनक थी। इस संदर्भ में कई बार जिज्ञासा व्यक्त करने पर उसे अरण्य में स्थित नील माधव की मूर्ति के बारे में बताया गया। इसके बाद तो जैसे विद्यापति के धैर्य की सीमा

नहीं रही। वह वन जाकर नील माधव की प्रतिमा के दर्शन हेतु व्याकुल हो गया। दूसरी तरफ विश्ववसु को यह भय था कि विद्यापति यदि अपने राजा इंद्रद्युम्न को इस बात की जानकारी दे देगा तो राजा दल-बल के साथ वहाँ आकर सदियों से पूजित श्री नील माधव की मूर्ति को अपने राज्य में ले जाएंगे। इसीलिए अपने दामाद की इच्छा का सम्मान करते हुए विश्ववसु ने विद्यापति की आँखों में पट्टी बाँध दी और फिर गंतव्य स्थान तक ले गया। वहाँ जाकर विद्यापति को देव के दर्शन हुए तथा नितदिन की भाँति विश्ववसु ने जंगल से पुष्प, कंदमूल इकट्ठा कर श्री नील माधव के चरणों में अर्पित किया।

उक्त पंक्तियों में 'रात्रि', 'खंड', 'सर्वदा', 'कंदमूल', 'हस्ते', 'अंध', 'निज' आदि शब्द संस्कृत के हैं। 'बंदी', 'पिता', 'जाए', 'देव', 'प्रतिदिन' ये सभी शब्द हिंदी भाषा के हैं। 'देब' बांग्ला भाषा में 'देव' के लिए प्रयुक्त होता है। 'देले' (दिया), 'बाट' (रास्ता) भोजपुरी शब्द हैं तथा 'पाति' (पेश करना/ फैलाकर) असमिया शब्द है। यहाँ उड़िया भाषा की वाक्य संरचना में विभिन्न भाषाओं के शब्दों के प्रयोग के कारण कोड मिश्रण की स्थिति उत्पन्न हुई है। विभिन्न भाषाओं के भिन्न भाषाई अवयवों के एक साथ प्रयोग के कारण बहुभाषिकता की स्थिति का भी बोध होता है। 'गृहरे' (घर में) तथा 'प्रहरकु' (प्रहर का) ये दोनों ही संस्कृतनिष्ठ उड़िया शब्द हैं। इन शब्दों में कारक चिह्न श्लिष्ट रूप में मौजूद हैं। 'मूरति', 'पुटलि' (पट्टी), 'खंडिये' (टुकड़ा), 'देखाईबि' (दिखाना) तथा 'देबई' (दूँगा) आदि शब्द निम्न कोड के रूप में प्रयोग किये गये हैं। इन शब्दों का मानक रूप क्रमशः 'मूर्ति', 'पुटुलि', 'खोंडिये', 'देखेईबि' तथा 'देईब' होगा। अतः यहाँ भाषाद्वैत की स्थिति है। 'आसि' बांग्ला तथा उड़िया दोनों भाषों में व्यवहृत शब्द है। 'खाउ-खाउ' (खाते-खाते) में पूर्ण पुनरुक्ति है जो क्रिया के संदर्भ में प्रयुक्त हुआ है। नाट्यांश में प्रयुक्त 'आँखिरे', 'हस्त' शरीर संबंधी; 'वन', 'कंदमूल' प्रकृति संबंधी तथा 'रात्रि', 'प्रहर' आदि खगोलीय प्रयुक्तियाँ हैं जो विशेष रूप से इन्हीं क्षेत्रों में प्रयुक्त होती हैं। इन शब्दों के अलावा मूल भाषा उड़िया के कुछ प्रमुख शब्दों का प्रयोग हुआ है। जैसे- 'थाये' (था), 'ताहाकू' (उसको), 'भजंति' (सुमिरन), 'खंडिये' (टुकड़ा), 'घेनिला' (खरीदना), 'खाउचंतित' (खा रहे थे) आदि। 'ताहाकु जे पिता मोर सर्वदा भजंति' तथा 'खाउ खाउ देव मोर बोलिन बोईला' इन दोनों पंक्तियों में टॉपिकीकरण की विशेषता दृष्टव्य है। इन वाक्यों को उड़िया भाषिक संरचना के सामान्य नियमों के अनुसार क्रमशः'मोर पिता जे ताहाकु सर्वदा भजंति' तथा 'मोर देव खाउ खाउ बोलिन बोईला' होना चाहिए। इन वाक्यों में भाषिक अवयवों का स्थान परिवर्तन विशेष प्रभाव उत्पन्न करने हेतु किया गया है। जैसे पहले वाक्य में कर्ता 'मोर पिता' के स्थान पर 'ताहाकु' शब्द को उसपर बल देने हेतु लाया गया है। इसी तरह से दूसरे वाक्य में कर्ता 'मोर देव' के स्थान

पर 'खाउ-खाउ' शब्द का प्रयोग किया गया है। वाक्य-संरचना में इस क्रम परिवर्तन अर्थात् टॉपिकीकरण का मूल उद्देश्य वाक्य में विशिष्ट प्रभाव उत्पन्न करना है।

"राजन बसाई सत्य करि कह विप्रवर
सत्यकि पाईस भेट आम्भ विष्णुंकर।।
बिद्यापति बोले मोहि देखिलि जुगते।
बटतले शुईचंति प्रभु जगन्नाथ।।"[4]

आशय यह है कि देव दर्शन के पश्चात् विद्यापति का मन प्रफुल्लित हो गया। इस सूचना को वह अतिशीघ्र राजा इंद्रद्युम्न तक पहुँचाना चाहता था। इसके लिए उसने अत्यंत चालाकी से पत्नी ललिता और ससुर विश्ववसु से अनुमति ली तथा अपने राज्य लौट गया। वहाँ जाकर उसने राजा को पूरी घटना का वृत्तांत सुनाया कि किस प्रकार उसे वट वृक्ष के नीचे प्रभु नील माधव जगन्नाथ के दर्शन हुए। राजा और विद्यापति के बीच के संवाद के कारण यहाँ प्रोक्ति के स्तर पर देखें तो गत्यात्मक संलाप की स्थिति है। उद्धृत पंक्तियों में *'राजन', 'सत्य', 'मोही', 'विप्रवर'* ये सभी शब्द संस्कृत भाषा के हैं। *'भेट'* (मुलाकात) भोजपुरी का तथा *'बोले'* शब्द हिंदी का है। जबकि इन पंक्तियों में अन्य शब्द जैसे *'बसाई'* (बैठाकर), *'पाईस'* (पाना), *'आम्भ'* (हमारे), *'देखिलि'* (देखा), *'बटतले'* (वट वृक्ष के नीचे), *'शुईचंति'* (सो रहे थे) आदि शब्द नाटक की मूल भाषा उड़िया के हैं। अर्थात् यहाँ संस्कृत, भोजपुरी और हिंदी भाषा के शब्दों का मिश्रण उड़िया भाषा के वाक्य के अंतर्गत हुआ है। अतः यहाँ कोड-मिश्रण की स्थिति है। *'बटतले'* में 'बट' शब्द 'वट वृक्ष' के लिए प्रयुक्त हुआ है। अतः इसे भाषाद्वैत के परिप्रेक्ष्य में 'वट' शब्द का निम्न कोडवत् प्रयोग भी कह सकते हैं। इसके अलावा *'शुईचंति'* तथा *'पाईस'* में भी भाषाद्वैत की स्थिति है क्योंकि इन शब्दों का उड़िया भाषा में मानक रूप 'सोईचंति' तथा 'पाइचि' है। *'विष्णुंकर'* तथा *'जगन्नाथ'* धर्म विषयक प्रयुक्ति है। यह भी ध्यान देने योग्य है कि *'सत्यकि पाईस भेट आम्भ विष्णुंकर'* तथा *'बटतले शुईचंति प्रभु जगन्नाथ'* इन दोनों वाक्यों का सामान्य व्याकरणसम्मत रूप क्रमशः 'आम्भ विष्णुंकर सत्यकि भेट पाईस' तथा 'प्रभु जगन्नाथ बटतले शुईचंति' होगा लेकिन यहाँ वाक्य के विभिन्न अवयवों पर विशेष बल देने हेतु टॉपिकीकरण की तकनीक को अपनाया गया है। जैसे- पहले वाक्य में कर्ता के स्थान पर 'आम्भ विष्णुंकर' की जगह 'सत्यकि' तथा दूसरे वाक्य में 'प्रभु जगन्नाथ' की जगह 'बटतले' को रखकर उनपर बल दिया गया है।

"शवरकु धर बोलि राज आज्ञा दिले।

आज्ञा पाई डगर जे ताहाकु बाँधिले।।

बनर शवर से जे होईला आरत।

आकुले डाकिले रक्षा करे जगन्नाथ।।

कंदमूल देई प्रभु राखिलिलि तोते।

एबेतु अनास्त करि छाड़ि गेलु मोते।।"[5]

पंक्तियों से तात्पर्य यह है कि विद्यापति से प्राप्त सूचना के आधार पर जब राजा इंद्रद्युम्न अपने सैनिकों के साथ अरण्य की ओर कूच करते हैं तब उन्हें जंगल में उस नियत स्थान पर जगन्नाथ प्रभु की प्रतिमा नहीं मिलती है। इससे राजा क्रोधावेश में आकर विश्ववसु शबर को बंदी बनाने की आज्ञा देते हैं। बिना किसी अपराध के कारावास हेतु दंडित होना विश्ववसु को अत्यंत आहत करता है। करुण स्वरों में वह नील माधव प्रभु जगन्नाथ को रक्षा हेतु पुकारने लगता है। वह कहता है कि हे प्रभु वर्षों तक मैंने आपके श्रीचरणों में कंदमूल अर्पित करके आपकी सेवा की है। अब ऐसी विषम परिस्थिति में मुझे अकेले छोड़ आप कहाँ अंतर्ध्यान हो गये। कृपया मेरी सहायता करें।

उपर्युक्त नाट्यांश में प्रयुक्त *'आज्ञा', 'आरत', 'रक्षा', 'कंदमूल'* आदि शब्द तत्सम हैं। *'अनास्त'* शब्द बांग्ला भाषा में प्रयुक्त होता है जो मूलतः संस्कृत शब्द 'अनास्थ' का निम्न रूप है। इसी तरह से *'आकुले'* उड़िया में प्रयुक्त शब्द है जो मूलतः संस्कृत शब्द 'आकुल' अर्थात् व्याकुल अथवा व्यग्र का उड़िया भाषा से प्रभावित रूप है। *'दिले'* असमिया भाषा की क्रिया है जिसका अर्थ है 'दिया'। इसके अतिरिक्त *'बनर'* (वन का) शब्द उड़िया तथा असमिया दोनों ही भाषाओं में प्रयोग किया जाने वाला शब्द है। इसे हिंदी के 'वन' शब्द का निम्न कोड कहा जा सकता है। *'डगर'* (रास्ता) शब्द उड़िया, भोजपुरी तथा हिंदी तीनों भाषाओं में व्यवहृत होने वाला शब्द है। *'राखिलिलि'* तथा *'करे'* ये दोनों शब्द निम्न कोड के रूप में प्रयुक्त हैं। *'राखिलिलि'* के लिए उड़िया भाषा में 'रोखिनेलि' मानक शब्द है तथा *'करे'* का प्रयोग ईश्वर के लिए हुआ है। अतः यहाँ 'करें' होना चाहिए। कुलमिलाकर यहाँ उड़िया भाषा के अंतर्गत विभिन्न भाषाओं के शब्दों के प्रयोग के कारण कोड-मिश्रण की स्थिति है। भाषा के निम्न कोड का प्रयोग भाषाद्वैत की ओर संकेत करता है तथा विभिन्न भाषिक अवयवों के अलग-अलग विकल्पवत प्रयोग के कारण भाषाई विकल्पन की स्थिति भी सहज दृष्टव्य है। इन शब्दों के अलावा नाटक के इस अंश में उड़िया भाषा के मूल शब्दों का प्रयोग हुआ है यथा- *'धर'* (पकड़ना),

'बोलि' (के लिए), *'ताहाकु'* (उसके), *'कु'* (को), *'बाँधिले'* (बाँधा), *'होईला'* (होना), *'डाकिले'* (बुलाना), *'देई'* (दिया), *'तोते'* (तुम्हें), *'एबेतु'* (अब तुम), *'छाड़ि'* (छोड़कर), *'गेलु'* (चले जाना), *'मोते'* (मुझे) आदि। उद्धृत पक्तियों में *'बनर', 'कंदमूल'* प्रकृति विषयक प्रयुक्ति है। टॉपिकीकरण की दृष्टि से देखें तो *'आज्ञा पाई डगर जे ताहाकु बाँधिले', 'बनर शवर से जे होईला आरत', 'कंदमूल देई प्रभु राखिलिलि तोते'* तथा *'एबेतु अनास्त करि छाड़ि गेलु मोते'* वाक्यों को उड़िया भाषा की सामान्य वाक्य-संरचना के अनुसार क्रमशः 'ताहाकु डगर जे आज्ञा पाई बाँधिले', 'बनर शवर से जे आरत होईला', 'प्रभु तोते कंदमूल देई राखिलिलि' तथा 'एबेतु मोते अनास्त करि छाड़ि गेलु' होना चाहिए लेकिन इन वाक्यों में प्रभावोत्पादकता को बढ़ाने के लिए विभिन्न भाषिक अवयवों को उनके व्याकरणसम्मत स्थान से स्थानांतरित किया गया है। जैसे- पहले वाक्य में कर्ता के स्थान पर 'ताहाकु' की जगह 'आज्ञा' को, दूसरे वाक्य में कर्म के स्थान पर 'आरत' की जगह 'होईला' क्रिया को, तीसरे वाक्य के आरंभ में कर्ता 'प्रभु' के स्थान पर कर्म 'कंदमूल' को तथा चौथे वाक्य में 'एबेतु मोते' के स्थान पर 'एबेतु अनास्त' को रखकर उनपर बल दिया गया है, जिससे कि विशेष प्रभाव उत्पन्न हो सके।

"मोहर बचन राजा सुन मन देई।
बसु जे शवर बनस्तरे थिला रहि।।
मो नीलमाधवरूपे पुजुखाये निति।
निज हस्ते कंदमूल मोते देउ चंति।।
शवर धरे थेउ पुत्र हेबे जात।
मोर बेशकारी सर्वे होईबे सुगत।।
खाईबार मुखमान गाड़िन से देव।
शवर हस्तर मोर अंगरे लागिबो।।
एहि कोथा राजा तू निश्चय करिबू।
शवर आनिन देश खंड ताकू देबू।।"[6]

कहते हैं न कि भगवान अपने भक्त की पुकार को कभी अनसुना नहीं करते हैं। वे सदैव अपने भक्त की रक्षा में तत्पर रहते हैं। उपर्युक्त पंक्तियों में इसी तरफ संकेत करते हुए कहा गया है कि जब विश्ववसु शबर ने अपने व्यथित स्वरों में प्रभु को पुकारना प्रारंभ किया तब उसकी आवाज से समूचा आकाश झंकृत हो उठा।

उस समय सहसा आकाशवाणी होती है जिसमें शबर को कारावास से मुक्त करने का आदेश दिया जाता है। इसके अलावा राजा को नीलगिरि पर्वत पर श्री जगन्नाथ प्रभु के भव्य मंदिर के निर्माण हेतु आज्ञा दी जाती है। तत्पश्चात् राजा इंद्रद्युम्न उस दिव्य वाणी में प्राप्त आदेश का शब्दशः पालन करता है। विश्वकर्मा स्वयं प्रकट होकर बिना हाथ-पैर वाले प्रभु जगन्नाथ की विशिष्ट प्रतिमा निर्मित करते हैं। प्रभु के आदेशानुसार पुरी स्थित जगन्नाथ मंदिर में विश्ववसु शबर की परवर्ती पीढ़ियाँ कालांतर से भोग बनाने तथा विधिवत पूजा-पाठ जैसे धार्मिक कार्यों में संलग्न हैं।

उद्धृत पंक्तियों में *'सुन'* तथा *'देव'* हिंदी एवं *'लागिबो'* (लगना) शब्द असमिया भाषा में प्रयुक्त होने वाले शब्द हैं। *'निज', 'हस्त', 'कंदमूल', 'पुत्र', 'सर्वे', 'खंड', 'निश्चय'* आदि शब्द संस्कृत के हैं। *'धरे'* (पकड़ना) बांग्ला भाषा की क्रिया है। उड़िया भाषा के इन आधार वाक्यों में अलग-अलग स्थानों पर हिंदी, असमिया, बांग्ला, संस्कृत आदि भाषाओं के शब्दों के प्रयोग के कारण यहाँ कोड-मिश्रण की स्थिति है। नाट्यांश की इस भाषाई विविधता से बहुभाषिकता की स्थिति का भी बोध होता है। *'खाईबार'* (खाने के लिए), *'बचन'* (वचन) उड़िया तथा बांग्ला दोनों ही भाषाओं में प्रयुक्त होने वाले शब्द हैं तथा *'कोथा'* उड़िया सहित बांग्ला तथा असमिया भाषा में 'बात' के लिए व्यवहृत शब्द है। इनके अलावा अधिकतर शब्द नाटक की मूल भाषा उड़िया के हैं। जैसे- *'मोहर'* (मेरा), *'देई'* (देकर), *'बसु'* (बैठा), *'थिला'* (था), *'मो'* (मैं), *'पुजुखाये'* (पूजा जाना), *'निति'* (रोज), *'मोते'* (मुझे), *'चंति'* (सहायक क्रिया- रहा था), *'थेउ'* (उसका), *'हेबे'* (होगा), *'एहि'* (यही), *'करिबू'* (करना), *'ताकू'* (उनको), *'देबू'* (देना), *'आनिन'* (लाना) आदि। यहाँ एक जगह राजा के लिए माध्यम पुरुष एकवचन के सर्वनाम 'तू' का प्रयोग किया गया है। वैसे तो यह सर्वनाम समाजभाषिक दृष्टि से सामाजिक-आर्थिक स्तरभेद के आधार पर निम्न, उम्र में छोटे आदि के लिए किया जाता है लेकिन यहाँ एक राजा के लिए इसका प्रयोग किया गया है। ध्यातव्य है कि ईश्वरीय सत्ता के समक्ष तो सभी प्राणी चाहे वह राजा हो या रंक लघुमानव ही है। अतः यहाँ 'तू' का प्रयोग ईश्वर द्वारा राजा के लिए किया गया है। *'बचन'* तथा *'शवर'* हिंदी के 'वचन' तथा 'शबर ' का निम्न कोड है। नाटक में इनका प्रयोग भाषाद्वैत के साथ ही भाषाई विकल्पन की स्थिति को भी दर्शाता है। लोक नाट्य के प्रस्तुत अंश की कुछ पंक्तियों में टॉपिकीकरण की स्थिति दृष्टव्य है- *'मोहर बचन राजा सुन मन देई', 'बसु जे शवर बनस्तरे थिला रहि', 'मो नीलमाधवरूपे पुजुखाये निति', 'निज हस्ते कंदमूल मोते देउ चंति', 'एहि कोथा राजा तू निश्चय करिबू'* आदि। इन्हें सामान्य भाषिक संरचना के अनुसार क्रमशः 'राजा मोहर बचन मन देई सुन', 'बनस्तरे जे शवर बसु रहि थिला', 'मो

नीलमाधवरूपे निति पुजुखाये', 'मोते निज हस्ते कंदमूल देउ चंति', 'राजा तू एहि कोथा निश्चय करिबू' के रूप में होना चाहिए। लेकिन इन वाक्यों में विशेष प्रभाव उत्पन्न करने हेतु विभिन्न भाषिक तत्वों को उनके नियत स्थान से स्थानांतरित किया गया है। जैसे प्रथम वाक्य में कर्ता के स्थान पर 'राजा' की जगह 'मोहर बचन' को, दूसरे वाक्य में 'बनस्तरे' के स्थान पर 'बसु' को, तीसरे वाक्य में कर्म 'निति' के स्थान पर 'पुजुखाये', चौथे वाक्य में कर्ता 'मोते' की जगह 'निज हस्ते', पाँचवे वाक्य में कर्ता 'राजा' के स्थान पर 'एहि कोथा' को रखा गया है, जिससे कि इन शब्दों की प्रभविष्णुता बढ़ गयी है।

निष्कर्षतः यह कहा जा सकता है कि वर्तमान समय में चाय जनगोष्ठी में लोक नाट्य का प्रचलन लगभग नहीं के बराबर है। हाँ, व्यक्तिगततौर पर लिखे गये नाटकों का मंचन होता है। यहाँ तक कि आकाशवाणी तथा दूरदर्शन के माध्यम से भी ऐसे नाटकों का प्रसारण और संरक्षण होने लगा है। इस तरह के सकारात्मक पहल की कमी के कारण आज चाय जनगोष्ठी के लोक नाट्य लोगों की अन्तश्चेतना से लगभग विस्मृत हो गये हैं। कुछ लोक नाट्यों का नाम तथा उससे संदर्भित केवल आधी-अधूरी कथा की जानकारी मिलती है। 'ललिता-शबर पाला' का प्रचलन उड़ीसा तथा पश्चिम बंगाल के लोधी, खड़िया, महतो आदि समुदायों में कुछ समय तक रहा है। यह एक गीति-नाट्य है। इस लोक नाट्य में आर्य तथा अनार्य संस्कृति के बीच के टकराहट तथा आर्यों के हस्तक्षेप को दर्शाया गया है। आदिवासी समाज के देव का हरण, आनुष्ठानिक धर्म-कर्म के मामलों में ब्राह्मणों की अगुवाई तथा उच्च वर्ण का वर्चस्व इस नाटक के माध्यम से अभिव्यक्त हुआ है। इस नाटक में ललिता-विद्यापति का प्रेम संसर्ग, ललिता तथा शबर की व्यथा और संघर्ष दर्शकों को अंत तक बांधे रखती है। नाटक के अंत में विश्ववसु शबर तथा उसकी परवर्ती पीढ़ियों को प्रभु जगन्नाथ आकाशवाणी द्वारा अपनी चिरकालिक सेवा का आदेश देते हैं। इस प्रकार सदियों से तुच्छ समझे जाने वाले आदिवासियों (शबर कुल) को आनुष्ठानिक देव सेवा हेतु सामाजिक प्रतिष्ठा की प्राप्ति से समाज की रूढ़िवादी परंपरा का नाश हो जाता है। साथ ही यह भी संदेश मिलता है कि ईश्वर की भक्ति पर प्रत्येक प्राणी का समानाधिकार है। जाति भेद से ऊपर उठकर ईश्वर की सच्ची सेवा ही मुक्ति का मार्ग है। इस लोक नाट्य की मूल भाषा उड़िया है। इसीलिए शब्दों का उच्चारण ओकारांत है। नाटक में यथास्थान संस्कृतनिष्ठ उड़िया का प्रयोग हुआ है। इसके अलावा बांग्ला, हिंदी, भोजपुरी तथा कमोबेश असमिया भाषा के शब्द भी प्रयुक्त हैं। इससे कोड-मिश्रण की स्थिति उत्पन्न हुई है तथा बहुभाषिकता की स्थिति का भी बोध होता है। कुछ-कुछ प्रसंगों में चलित भाषा के शब्दों के प्रयोग से भाषाद्वैत के साथ ही भाषाई विकल्पन की स्थिति भी स्पष्ट रूप में देख सकते हैं। संपूर्ण नाटक अपने आप में एक प्रोक्ति

है क्योंकि इसमें प्रयुक्त सारे वाक्य आपस में मिलकर एक निश्चित संदेश प्रेषित करते हैं। नाटक के अलग-अलग प्रसंगों में विभिन्न क्षेत्रों यथा- धर्म, मानवीय संबंधों, प्रकृति विषयक प्रयुक्तियों का भी प्रयोग हुआ है। उड़िया तथा हिंदी भाषा की पुनरुक्तियों के प्रयोग तथा वाक्यों में टॉपिकीकरण की स्थिति से नाटक की भाषा अत्यंत आकर्षक बन गयी है तथा इसमें अंत तक लयात्मकता बरकरार है। इस पूरे नाटक के अध्ययन-विश्लेषण के उपरांत शबर आदिवासी समाज के गौरवशाली अतीत, उनकी समृद्ध भाषा, संस्कृति और सामाजिक प्रस्थिति का बोध होता है। ध्यातव्य है कि शबर समाज के विभिन्न पक्षों के बोध का आधार यह लोक नाट्य और उसकी भाषा ही है। यही समाजभाषावैज्ञानिक अध्ययन की प्रासंगिकता है।

संदर्भ सूची-

1. (सं.) बसंत राजोवार, गणेश चंद्र कुर्मी रचनावली, पृष्ठ संख्या. 677
2. वही, पृष्ठ संख्या. 678
3. वही, पृष्ठ संख्या. 679
4. वही, पृष्ठ संख्या. 679
5. वही, पृष्ठ संख्या. 690
6. वही, पृष्ठ संख्या. 681